इकाई 17 जीवनी (निराला की साहित्य साधना)

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 जीवनी और अन्य गद्य विधाएँ
17.3 जीवनी की संरचना और विशेषताएँ
17.4 जीवनी लेखक रामविलास शर्मा
17.5 'निराला की साहित्य साधना' का पठन
17.6 'निराला की साहित्य साधना' का विश्लेषण
17.6.1 प्रतिपाद्य
17.6.2 भाषा-शैली
17.7 सारांश
17.8 शब्दावली
17.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

17.0 उद्देश्य

यह निराला जी की जीवनी का एक अंश है। इस जीवनी के लेखक हैं रामविलास शर्मा। इस पाठ में लेखक ने निराला जी के जीवन के उन महत्वपूर्ण प्रसंगों पर प्रकाश डाला है, जिनसे एक अक्खड़ ग्रामीण युवक से एक विख्यात कवि के रूप में निराला जी के उदय की यात्रा की झलक मिलती है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- साहित्यिक विधा जीवनी की रचना के तत्वों की व्याख्या कर सकेंगे,
- गद्य साहित्य में जीवनी के स्थान की चर्चा कर सकेंगे,
- इस जीवनी के अंश से निराला के चरित्र की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे,
- रामविलास शर्मा कृत इस जीवनी का आस्वादन और मूल्यांकन कर सकेंगे, और
- जीवनी लेखन की विशेषताओं को पहचानकर उसमें प्रवृत्त हो सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में गद्य का आविर्भाव उन्नीसवीं शताब्दी के अत्तरार्द्ध में हुआ। प्रथम स्वाधीनता संग्राम के क्रूर दमन के बाद, हिंदी प्रदेश में, वैचारिक अभिव्यक्ति के साधनों की खोज के क्रम में ही गद्य के अनेक रूप सामने आए। वैचारिक विवाद और संघर्ष के लिए गद्य के विभिन्न रूपों के विकास के कारण ही भारतेन्दु युग को 'गद्य काल' भी कहा जाता है। स्वाधीनता के लिए लड़ी जाने वाली लड़ाई के दौर में देशी-विदेशी महापुरुषों का स्मरण इस लड़ाई के एक अनिवार्य कार्यभार के दौर में स्वीकार किया गया। त्याग, बलिदान और तेजस्विता इस स्मरण के प्रमुख घटक बनकर उपस्थित हुए। ब्रिटिश साम्राज्यवाद की फूट डालने और राज करने की नीति के विरुद्ध साम्प्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देने वाले तत्वों को भी इस कार्यभार में शामिल करके चलने की प्रवृत्ति इस काल में दिखाई देती है।

अपने संक्षिप्त जीवन-काल में स्वयं भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अनेक महापुरुषों के संक्षिप्त जीवन-वृत्त लिखे। एक ओर उन्होंने विक्रम, कालिदास, रामानुजाचार्य, शंकराचार्य, वल्लभाचार्य और महाकवि सूरदास आदि के जीवन-वृत्त लिखे, वहीं उन्होंने सुकरात, नेपोलियन तृतीय और लार्ड म्यो आदि के जीवन चरित्र भी लिखे। अपने समय में प्रचलित मुस्लिम-विरोधी विचारधारा के विरुद्ध भी वे सक्रिय हस्तक्षेप करते दिखाई देते हैं। आर्य समाज द्वारा प्रेरित और संचालित 'शुद्धि आंदोलन' के प्रभाव से वे अपने को मुक्त रखते हैं जिसके प्रभाव में तब बाबू देवकी नंदन खत्री सहित कई महत्वपूर्ण लेखक थे। इसका प्रमाण वे कुरान शरीफ का सार-संक्षेप हिंदी में प्रस्तुत करके देते हैं। इस तरह जीवनी साहित्य को ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ी जा रही लड़ाई में एक उपयोगी अस्त्र की तरह इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति बहुत मुखर

भले ही न हो, उसके लिए व्यंग्य और उपहास की वैसी शैली भी विकसित होती नहीं दिखाई देती है। फिर भी एक नव प्रस्फुटित गद्य-विधा के रूप में जीवनी को गंभीरता से लिए जाने का संकेत अवश्य देता है। चूंकि जीवनी का विकास अपने समय संदर्भों की आवश्यकता के बीच हुआ था, उसके प्रेरक और उद्‌बोधक स्वरूप के प्रति उसकी चिंता स्वाभाविक है।

17.2. जीवनी और अन्य गद्य विधाएँ

वैसे तो सारे साहित्य और कलाओं का मूल स्रोत जीवन ही है, लेकिन फिर भी कुछ साहित्य-रूप इस 'जीवन' का उपयोग बहुत सीधे और प्रत्यक्ष रूप में करते हैं। जीवनी के साथ इस तरह के अन्य साहित्य-रूप आत्मकथा, संस्मरण और रेखाचित्र आदि हैं। साहित्य में जीवनी से बहुत मिलता-जुलता रूप आत्मकथा का है। जीवनी और आत्मकथा दोनों में ही सामान्यतः किसी महत्वपूर्ण और अपने क्षेत्र में उल्लेखनीय व्यक्ति के संपूर्ण जीवन को ही रचना का आधार बनाया जाता है। 'जीवनी' में जीवन की इस आधार-सामग्री को कोई दूसरा व्यक्ति प्रस्तुत करता है जबकि आत्मकथा में 'कथा' जीवनी का पर्याय होने पर भी मूल बल 'आत्म' पर होता है और उसमें जीवन का प्रस्तुतीकरण वही व्यक्ति करता है जिसका वह जीवन होता है। इन दोनों ही साहित्य रूपों में सामान्यतः संपूर्ण जीवन को ही आधार सामग्री के रूप में उपयोग में लाया जाता है। हिंदी में एक ओर यदि राहुल सांकृत्यायन और बच्चन की आत्मकथाएँ कथा के रूप में उल्लेखनीय हैं वहीं अमृतराय की 'प्रेमचंद कलम का सिपाही', रामविलास शर्मा कृत 'निराला की साहित्य साधना' और विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित शरच्चंद की जीवनी 'आवारा मसीहा' आदि कुछ विशिष्ट और उल्लेखनीय जीवनियों के रूप में स्वीकृत हैं। कभी कभी किसी व्यक्ति के जीवन को ही आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किए जाने के उदाहरण भी मिलते हैं। विष्णुचंद्र शर्मा ने मुक्तिबोध की जीवनी को 'मुक्तिबोध की आत्मकथा' के रूप में प्रस्तुत किया है।

दो उल्लेखनीय जीवनियाँ - 'अग्नि सेतु' और 'समय साम्यवादी' - में क्रमशः बांगला कवि काजी नज़रुल इस्लाम और राहुल सांकृत्यायन के जीवन-वृत्त को जीवनी के स्वीकृत रूप में ही प्रस्तुत किया है। जीवनी अपनी प्रामाणिकता और विश्वसनीयता के तथ्यों के आवेषण और प्रस्तुतिकरण पर बल देती है जबकि आत्मकथा स्वयं अपने बारे में तथ्यों के निर्मम और साहसिक उद्‌घाटन के कारण ही उल्लेखनीय मानी जाती है। हिंदी में पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' की अपेक्षाकृत संक्षिप्त आत्मकथा के रूप में स्वीकृत रही है। जीवनी में प्रस्तुत तथ्य ही उसे प्रामाणिक और विश्वसनीय बनाते हैं, लेकिन कदाचित् ऐसी जीवनी असंभव है जिसमें लेखक कल्पना का उपयोग न करता है। जिस जीवन को वह प्रस्तुत करता है वह सामान्यतः काफी पहले बीत चुका होता है। उस जीवन के पुनर्सर्जन के लिए उसे बहुधा ही अपनी सर्जनात्मक कल्पना का सहारा लेना होता है। लेकिन वह काल्पनिक पुनर्सर्जन भी अनिवार्यत: अन्य दूसरे स्रोतों से प्रामाणित होना चाहिए। रांगेय राघव ने कृष्ण, बुद्ध और गोरखनाथ सहित अनेक मध्यकालीन संतों और कवियों के जीवन पर आधारित जो उपन्यास लिखे हैं उन्हें सामान्यतः जीवन चरित्र के उपन्यास के रूप में ही स्वीकृति मिली है। इसका आधारभूत कारण यही है कि जीवनी की अपेक्षा उनमें कल्पना का उपयोग अधिक हुआ है। इस पुनर्सर्जन की ऐतिहासिक प्रामाणिकता यहाँ भी बनी रहती है लेकिन जीवन के ब्यौरों और घटना-प्रसंगों की प्रस्तुति में यहाँ पर्याप्त स्वतंत्र रहने की छूट ली जा सकती है। जीवनी में ऐसी कोई छूट एक सीमित मात्रा में ही संभव होती है।

दूसरे साहित्य रूपों में जीवनी के निकट आने वाली विधाओं में रेखाचित्र और संस्मरण मुख्य हैं। *रेखाचित्र* के लिए उस व्यक्ति का बहुत प्रसिद्ध या सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होना अनिवार्य नहीं है। महादेवी वर्मा के 'अतीत के चल चित्र' और रामवृक्ष बेनीपुरी के 'माटी की मूरतें' में जिन व्यक्तियों के रेखाचित्र हैं, जीवन और समाज मे वे लोग सामान्यतः हाशिए के लोग हैं। फिर भी उनके जीवन को इन दोनों ही रचनाकारों ने गहरी संवेदना और हार्दिकता के साथ व्यक्त किया है। यहाँ जीवन के कुछ पक्ष उतनी आत्मीयता के साथ प्रस्तुत किए गए हैं कि वे संपूर्ण उपेक्षित और वंचित वर्ग के प्रतिनिधि बनकर हमारी सहानुभूति के पात्र बन जाते हैं। वहाँ उनका पूरा जीवन हमारे सामने नहीं होता लेकिन उनके जीवन के कुछ प्रसंग या फिर उन प्रसंगों की भूमि ही उन्हें एक ऐसा आत्मिक संस्पर्श देती है जिसके कारण उनके प्रति करुणा का उद्रेक हुए बिना नहीं रहता। सामान्य और उपेक्षितों के प्रति इस मानवीय करुणा में ही इन लेखकों की सफलता निहित है। वैसे उपन्यास, कहानी, जीवनी साहित्य में भी रेखाचित्र की कलागत विशिष्टताओं का उपयोग हो सकता है, होता भी है, लेकिन एक विधा के

रूप में रेखाचित्र उपेक्षितों के प्रति अपनी आत्मीयता और करुणा के बीच से ही अपनी पहचान बनाता है।

संस्मरण में सामान्यतः उस व्यक्ति का स्मरण होता है जो सामाजिक सांस्कृतिक जीवन में अपने उल्लेखनीय योगदान के लिए जाना जाता है। इसमें जीवनी और रेखाचित्र के तत्वों का प्रचुर मात्रा में उपयोग होने पर भी मुख्य बल उस संबद्ध व्यक्ति से लेखक के निजी संबंध और संपर्क पर ही होता है। अपने सम्पर्क के आधार पर ही लेखक उस व्यक्ति के जीवन के किसी विशिष्ट पहलू का आकलन और पुनर्सर्जन करता है। कभी-कभी यह आकलन मतभेद और विवाद का कारण भी बन सकता है क्योंकि लेखक अपनी दृष्टि से ही उस व्यक्ति विशेष को प्रस्तुत करता है। अश्क का 'मंटोः मेरा दुश्मन ' इस तरह के विवादास्पद संस्मरणों का एक सहज सुलभ उदाहरण माना जाता रहा है। यहाँ कदाचित् लेखक के इस दृष्टिकोण की भूमिका को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है। अपने समकालीन लेखकों पर लिखे गए संस्मरणों में महादेवी वर्मा के 'पथ के साथी' और अज्ञेय के 'स्मृति लेखा' से लेकर काशीनाथ सिंह और दूधनाथ सिंह सहित अनेक लेखकों के संस्मरण देखे जा सकते हैं। ये संस्मरण जीवनी की तरह न तो व्यवस्थित होते हैं और न ही संपूर्ण, फिर भी वे संबद्ध व्यक्ति के जीवन को ही प्रस्तुत करते हैं।

17.3 जीवनी की संरचना और विशेषताएँ

जीवनी शब्द जीवन से बना है; इसमें किसी व्यक्ति के जीवनवृत्त का वर्णन होता है। अंग्रेज़ी शब्द biography भी यही अर्थ देता है - bio जीवन graphy वर्णन। जीवन चरित में एक ओर जीवन की स्थूल बाह्य घटनाएँ हैं - कुछ रोचक, कुछ विस्मयकारी। दूसरी ओर किसी व्यक्ति के चरित्र की कुछ विशेषताएँ हैं जो पाठक के लिए प्रेरणादायी बन सकती हैं। जीवनी में जीवन की प्रमुख घटनाओं के माध्यम से व्यक्ति के आंतरिक मानसिक विकास का चित्रण किया जाता है। जीवनी में बाह्य और आंतरिक का सामंजस्यपूर्ण चित्रण होता है।

जीवनी की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :

क) **आदर्श चरित्र** : जीवनी उसी व्यक्ति की लिखी जाती है जिसमें चारित्रिक विशेषताएँ हों और लोग उस व्यक्ति के जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर सकें। इस दृष्टि से आम तौर पर इतिहास में प्रसिद्ध और अपने क्षेत्र में ख्याति-प्राप्त व्यक्तियों की ही जीवनी लिखी जाती है।

आधुनिक युग में इस नज़रिए में कुछ परिवर्तन आया है। अब साहित्य में आम आदमी द्वारा आम आदमी के लिए लिखने पर बल है। नए युग में उन लोगों की जीवनी भी लिखी जाती है, जो ख्यातनामा नहीं हैं।

ख) **प्रामाणिकता** : जीवनी का उद्देश्य तभी पूरा होगा जब तथ्य और घटनाक्रम प्रामाणिक हों। अन्यथा वह कथा साहित्य होगा, जिसमें आदर्श चरित्र या कथानायक की सृष्टि की जाती है। जीवनी कथा साहित्य नहीं है, इसलिए जब तक वह प्रामाणिक न हो, लोग उसे प्रेरणास्पद नहीं मानेंगे। यह बात लेखक की विश्वसनीयता से भी जुड़ती है। लेखक को चाहिए कि वह जीवनी के नायक (या नायिका) के पत्र, डायरी, उनपर लिखे गए दूसरों के संस्मरण, निजी संबंधों की यादें, संभव हो तो उस व्यक्ति से लिए गए भेंट-वार्तालाप आदि का उपयोग करें।

ग) **संवेदना का स्वर** : जीवनी में नायक (या नायिका) के प्रति लेखक में आदर, श्रद्धा और गर्व का भाव होना चाहिए, जिससे वह आदर्श चरित्र की प्रमुख विशेषताओं को उजागर कर सके। लेखक का काम इतना ही नहीं है कि वह ऐतिहासिक क्रम से घटनाओं का प्रस्तुतीकरण कर दे। वह आदर्श चरित्र की उन विशेषताओं को ढूँढ़ निकालता है, जो पहली नज़र में सामने नहीं आते। संवेदना और आदर्श चरित्र के साथ संबंधों के आधार पर कई तरह की जीवनियाँ होती हैं। ये हैं - आत्मीय जीवनी, लोकप्रिय जीवनी, कलात्मक जीवनी और मनोवैज्ञानिक जीवनी।

घ) **वर्णन की तटस्थता** : चाहे लेखक आदर्श चरित्र के कितने ही निकट क्यों न हो, कितने ही श्रद्धालु क्यों न हों, उनका चित्रण तटस्थ और निष्पक्ष होना चाहिए। उन्हें अपनी तरफ़ से कुछ छिपाना या बढ़ाना नहीं चाहिए; उन्हें अपनी ओर से संदेश देना या निष्कर्ष निकालना नहीं चाहिए।

ङ) **भाषा और शैली** : वर्णन की तटस्थता के बावजूद चित्रण सपाट न हो और न ही वर्णन उबाऊ हो। जीवंत चित्रण और आकर्षक शैली साहित्यिक जीवनियों का परम गुण है।

बोध प्रश्न 1

1. जीवनी की चार प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
   क)..... ख).....
   ग) ..... घ).....

2. जीवनी और रेखाचित्र में प्रमुख अंतर क्या है?
   .....
   .....
   .....

17.4 जीवनी लेखक रामविलास शर्मा

रामविलास शर्मा ने निराला संबंधी अपनी अत्यंत महत्वाकांक्षी योजना के अंतर्गत, जो 'निराला की साहित्य साधना' नाम से तीन खण्डों में सम्पन्न है, 'निराला की साहित्य साधना' भाग-1 के रूप में निराला की सुविस्तृत जीवनी प्रस्तुत की। इसका प्रकाशन 1969 में हुआ। रामविलास शर्मा भले ही निराला की यह जीवनी लिखकर हिंदी में जीवनी लेखकों की प्रथम पंक्ति में आ गए हों, लेकिन मूलतः वे आलोचक और कवि हैं। वे अपनी साहित्य, संस्कृति और भाषा संबंधी नीतियों के लिए पर्याप्त विवादास्पद भी रहे। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' (1943) में एक कवि के रूप में शामिल किए गए। उनके आलोचनात्मक निबंधों का प्रकाशन उनके अध्ययन काल में, तीस के दशक में ही होने लगा था। वस्तुतः इसी दौर में वे लखनऊ में ही निराला के आत्मीय और घनिष्ठ संपर्क में आए और एक लंबे अरसे तक निराला के निकट संपर्क में रहे। लखनऊ में अपने अध्ययन काल में काफी समय वे दोनों एक साथ रहे। तीन खण्डों में समाप्त निराला संबंधी इस बृहद् और महत्वाकांक्षी रचना में डॉ0 शर्मा ने निराला के व्यक्तित्व, जीवन चरित्र और कला के साथ ही उनके और उन्हें लिखे गए पत्रों का संकलन भी प्रस्तुत किया है। आधुनिक कवियों में निराला डॉ0 शर्मा की पहली पसंद रहे हैं। इसके पूर्व सन् 1946 में भी निराला पर उनकी एक पुस्तक छप चुकी थी जो अपने परवर्ती रूप में, अनेक संशोधनों और परिवर्धनों के साथ, निराला-साहित्य के मूल्यांकन की दृष्टि से एक उल्लेखनीय कृत्ति मानी जाती रही है। लेकिन 'निराला की साहित्य साधना' अपनी प्रकृति लक्ष्य में एक भिन्न, अधिक अर्थपूर्ण और संपूर्ण रचना है। इसके पहले खण्ड के प्रकाशन के अगले वर्ष, सन् 1970 में, इस पर उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ।

'निराला की साहित्य साधना' के प्रथम खण्ड मे निराला का जीवन चरित्र है। इसकी भूमिका में लेखक ने इस रचना के अपने उद्देश्य और इसकी प्रकृति की ओर संकेत करते हुए लिखा है, 'इसे लिखते समय मेरा ध्यान उनके व्यक्तित्व के अध्ययन की ओर रहा है। पन्द्रह अध्यायों में उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण है यह साहित्यकार का जीवन-चरित है, इसलिए इसमें किसी हद तक उनके साहित्य का मूल्यांकन भी शामिल है पर यह पुस्तक उनके साहित्य की आलोचना नहीं है। निराला के पारिवारिक, सामाजिक परिवेश से, उस युग की सांस्कृतिक परिस्थितियों से उनके जीवन के बाह्य रूपों के साथ उनके अंतर्जगत से पाठकों को परिचित कराना मेरा उद्देश्य है।' अपनी इसी भूमिका में लेखक ने इस ओर भी संकेत किया है कि तथ्य संग्रह और विश्लेषण दोनों दृष्टियों से उसकी यह पुस्तक निराला संबंधी उसकी पहली पुस्तक से मूलतः और तत्वतः भिन्न है। इसी पुस्तक का पहला अध्याय 'सुर्जकुमार तिवारी' हमारे अध्ययन का विषय है। आइए, पहले हम जीवनी के अंश का पठन करें।

17.5 'निराला की साहित्य साधना' का पठन

माघ शुक्ल 11, संवत् 1955, तदनुसार 29 फरवरी, 1899 को रामसहाय तेवारी के घर पुत्र-जन्म हुआ। उस दिन मंगल था; ईश्वर ने अपनी पूजा के ही दिन रामसहाय को पुत्र का मुँह दिखाया। दरवाज़े पर बाजे बजे; नाई, धोबी, डोम वगैरह नेग माँगने आए। महिषादल में अवध के और परिवार भी रहते थे, कई घर बैसवाड़े के ही लोगों के थे। इन सबसे स्त्रियाँ आईं; सोहर होने लगे। थोड़ी देर के लिए रामसहाय को लगा कि वह गढ़ाकोला में ही उत्सव मना रहे हैं। खैर, अभी न सही, जैसे ही मौका

मिला, वह पुरखों की देहरी छुलाने बच्चे को गाँव ज़रूर ले जाएंगे। पंडित ने कहा - लड़का है बड़ा भाग्यवान, बड़ा नाम करेगा। इसका नाम रखो - सुर्जकुमार।

सुर्जकुमार अब आठ साल के हो गए थे। लोगों से सुनते कि जनेऊ हो जाने के बाद लड़के हर किसी के हाथ का छुआ खा-पी नहीं सकते। सुर्जकुमार सोचते, आखिर जनेऊ पहनने से ऐसा क्या हो जाएगा कि मैं दूसरे का छुआ खा न सकूँगा। पतुरिया* के लड़कों से दोस्ती थी। उसके यहाँ आना-जाना बंद करना पड़ेगा। अब ताल्लुकदार भगवानदीन दुबे नहीं थे। समाज में इस परिवार का मान घट गया था। जब ताल्लुकदार ने बड़े लड़के शमशेर बहादुर का जनेऊ किया था, तब ब्रह्मभोज में सब बाम्हन शामिल हुए थे। पर अब इन्हीं लोगों ने उनके यहाँ खाना-पीना बंद कर दिया था। पतुरिया के छोटे लड़के फतहबहादुर ने सुर्जकुमार से कहा, 'अभी तुम हमारे यहाँ खाते हो, जब जनेऊ हो जाएगा, न खाओगे।' उन्हें यह भी याद दिलाया कि उनके ताल्लुकदार पिता ने सुर्जकुमार के बड़े चाचा को ज़मीन माफी दी थी। फतहबहादुर की बहन परागा ने कहा, 'बदलू सुकुल के यहाँ महुए की लप्सी खाओगे, हमारे यहाँ हलुआ नहीं।' सुर्जकुमार ने तय किया कि जनेऊ के बाद भी इनके यहाँ खाएँ-पीएँगे, देखें कोई क्या कर लेता है।

भैयाचार आए। यज्ञोपवीत* संस्कार पूरा हुआ। प्रथा के अनुसार सुर्जकुमार ने हठ किया कि विद्या पढ़ने जाएँगे; माँ की जगह काकी ने मानते हुए कहा, बेटा मान जाओ, घर छोड़कर मत जाओ। पंडितजी ने मंत्र पढ़े। सुर्जकुमार ने जनेऊ पहना, अब वह बाकायदा द्विज हुए। पिता ने सावधान किया, 'अब आज से, खबरदार, पतुरिया के घर का कुछ खाना-पीना मत।' सुर्जकुमार को याद आया कि पतुरिया मुसलमान है, उसके लड़के अपने को पंडित समझते हैं, इसलिए माँ होने पर भी उसे भोजन दूर से देते हैं। पिता से बोले, 'पतुरिया का छुआ तो उसके लड़के भी नहीं खाते-पीते।' रामसहाय ने कहा, 'उनके हाथ का भी मत खाना।' पर सुर्जकुमार ने हुज्जत की 'जब ताल्लुकदार थे, तब आप लोग उनका छुआ खाते थे?' इस पर रामसहाय ने डाँटकर कहा, 'हम जैसा कहते हैं कर।'

एक दिन पतुरिया-पुत्र फतहबहादुर कुएँ पर नहा रहे थे कि उधर सुर्जकुमार निकले। इन्हें देखकर फतहबहादुर व्यंग्य से मुस्कराए। मतलब यह कि अब तुम्हारी हिम्मत नहीं कि हमारे यहाँ खाओ-पियो। सुर्जकुमार ने मतलब समझकर कहा, 'भैया, पानी पिला दीजिए।' फतहबहादुर ने प्रसन्न होकर पानी पिलाया, गाँव के जो ब्राह्मण उन्हें अपमानित करते थे, उनसे उन्होंने इस तरह बदला लिया। ब्राह्मणों को मालूम हुआ। उन्होंने जाकर रामसहाय से शिकायत की - 'आपका लड़का सबके सामने पतुरिया के छोटे लड़के का भरा पानी उन्हीं के लोटे से पी रहा था। अभी नादान है, इसलिए इस दफ़ा माफ किए देते हैं; फिर अगर हरकत करते देखा गया, तो हमें लाचार होकर आपसे व्यवहार तोड़ना होगा।' शिकायत सुनकर रामसहाय तेवारी को बड़ा क्रोध आया, सुर्जकुमार की अच्छी तरह मरम्मत कर डाली। पर इससे पतुरिया-परिवार से सुर्जकुमार का स्नेह-संबंध टूटा नहीं। कुछ दिन बाद उन्होंने फिर वैसी ही हरकत की। और यह चोरी-छिपे नहीं वरन् खुलकर, जिससे दम्भी विप्रवर्ग* को सब-कुछ मालूम हो जाए। गाँव के मुखिया ने रामसहाय से कहा, 'क्या तुम दूसरों का धर्म लेना चाहते हो? आज तुम्हारा लड़का पतुरिया के लड़के से ले-लेकर भुने चने चबा रहा था। आज से गाँव के ब्राह्मणों में तुम्हारा व्यवहार बंद है।'

रामसहाय तेवारी के स्वभाव में क्रोध और स्वाभिमान की मात्रा बराबर थी। इसके सिवा वह सुर्जकुमार को प्यार भी करते थे; क्रोध में आकर जब-तब हाथ छोड़ बैठते थे पर यह आवेश क्षणिक होता था। जाति-बिरादरी की मर्यादा के लिए वह अपने प्यारे पुत्र की फिर ठुकाई करें, यह असंभव था। इस बार उनका सारा क्रोध मुखिया पर बरस पड़ा। उन्होंने डाँटकर कहा, 'तू हमारा पानी बंद करेगा? शहर में होते तो देखते हम, कितने आदमियों का बम्बे का पानी और डाक्टर की दवा छुड़ाते हो। यहाँ क्या नाम करने को कौन-सा काम और गाने को छीता हरन।' मुखिया से कुछ जबाब देते न बना। अपना-सा मुँह लेकर चले गए। रामसहाय ने बेटे का पक्ष ही नहीं लिया, मुखिया के विरुद्ध उसी का दिया हुआ तर्क भी इस्तेमाल किया। सुर्जकुमार ने ही उनसे पूछा था, 'जब ताल्लुकेदार थे, तब आप लोग उनका छुआ खाते थे? रामसहाय ने पुत्र को डाँट दिया था, पर मन में उसकी तर्क-बुद्धि के कायल थे।

जनेऊ के बाद सब लोग महिषादल आए। रामसहाय ने अब सुर्जकुमार की पढ़ाई की ओर ध्यान दिया। महिषादल में हाई स्कूल था ही। उन्होंने सुर्जकुमार को उसी में भर्ती कराने का विचार किया। 13 सितम्बर, 1907 को महिषादल स्कूल की कक्षा 8 सेक्शन-बी (अब के हिसाब से तीसरी कक्षा) में सुर्जकुमार का नाम लिखा दिया। पिता और गार्जियन - रामसहाय तेवारी; निवास स्थान - गढ़ाकोला, उन्नाव; पेशा - नौकरी; 'रिमार्क्स' के खाने में हेडमास्टर जे.एन.कुंजीलाल ने लिखा - 'ऐडमिशन फ्री'। राजकर्मचारी का लड़का था, भर्ती होने की फीस नहीं ली गई। उम्र दो साल बढ़ाकर लिखाई गई - दस साल आठ महीने। सुर्जकुमार की क्लास के दूसरे लड़के ज्योतीषचन्द्र, विभूतिभूषण आदि चौदहवें, पन्द्रहवें साल में थे; सुर्जकुमार का अभी नवाँ ही चल रहा था। कद में लम्बे होने पर भी

वह अपनी कक्षा में सबसे कम उम्र वाले लड़कों में थे। अब तक घर में कोई नियमित पढ़ाई भी न हुई थी, इसलिए दर्जे में उनका कमज़ोर रहना अनिवार्य था।

स्कूल में पढ़ते हुए सुर्जकुमार तेवारी राजा, अंग्रेज़, जमादार - इन शब्दों का अर्थ समझने लगे। गढ़कोला से महिषादल कितना भिन्न है! कहाँ वह छोटी-सी लोन नदी, कहाँ यह विशाल नद रूपनारायण! हर तरफ़ पानी-ही-पानी दिखाई देता है; नदियाँ, नाले, तालों की तो गिनती नहीं। उपजाऊ धरती, हर तरफ वृक्ष, लताएँ, घास, फूल और काँटे, सब बेसँभाल बढ़ते-फैलते हुए; क्षितिज तक फैले हुए सुनहले धान के खेत, बीच में खेतों को चीरती हुई सड़क, आस-पास और क्षितिज पर गहरे हरे रंग के वृक्षों की पाँति। दृश्य सुंदर किंतु मलेरिया का प्रकोप, सारा क्षेत्र विषैले साँपों से भरा हुआ।

राजमहल के चारों ओर प्रशस्त* उद्यानभूमि, हरी दूब वाले बड़े-बड़े पार्क, पानी से भरी हुई परिखा में कमल, बड़े-बड़े लाल गुलाबों से भरा हुआ पूरा एक मैदान; बेला, जुही, हरसिंगार, बकुल, चम्पा के ऋतु-अनुसार फूल; आम, जामुन, लीची, फालसे, अनार, कटहल के वृक्ष; जगह-जगह बाँसों के झाड़; नारियल के पेड़ हर तरफ़। सुर्जकुमार ने पिता के साथ उन कमरों की झलक भी देखी जिनमें ज़री के काम वाले वस्त्र, जवाहारात, सोने के आभूषण, कीमती बर्तन रखे जाते थे। बड़े-बड़े संदूकों में राजकोष यहाँ रखा रहता है, इसका आभास भी उन्हें था। महल के हर निकास पर पहरा रहता है, यह भी उन्हें मालूम था। चौधरी भगवानदीन दुबे गढ़ाकोला में ताल्लुकेदार कहलाते थे; महिषादल में उनकी हैसियत एक मामूली नौकर से ज़्यादा न होती। महिषादल राज्य लगभग चार सौ वर्गमील का क्षेत्र घेरे हुए था, सालाना आमदनी बारह लाख थी। तीन लाख छत्तीस हज़ार तो सरकारी मालगुज़ारी देनी होती थी।

एक दिन सुर्जकुमार ने पिता से कहा, "तुम्हारे मातहत* इतने सिपाही हैं, तुम इस राजा को लूट क्यों नहीं लेते?" रामसहाय को शक हुआ कि उनक बेटे को किसी दुश्मन ने बरगलाया है। उन्होंने पूछा - किसने सिखाया है? सुर्जकुमार ने जितना ही इंकार किया, उतना ही उनका शक पक्का होता गया। उन्होंने लड़के को बहुत मारा, इतना मारा कि सुर्जकुमार बेहोश हो गए। राजा ईश्वरप्रसाद ने रामसहाय को अपने यहाँ नौकर रखा था, उनके पुत्र सतीप्रसाद पर रामसहाय की सहज ममता थी। अब वह साठ के नज़दीक पहुँच रहे थे। इस उम्र में राजा के खिलाफ़ बग़ावत? पुत्र पर क्रोध करना स्वाभाविक था। फिर राजा क्षत्रिय न होकर ब्राह्मण थे। अलबत्ता कान्यकुब्ज न थे, सरयूपारीण ही थे, पर थे तो ब्राह्मण। पछाँह से उनका संबंध था। घर के लोग साफ़ हिंदी बोलते थे। हर दृष्टि से सुर्जकुमार का सुझाव उन्हें किसी शत्रु का रचा हुआ षड्यंत्र ही लगा।

सुर्जकुमार को राह पर लाने के लिए उन्होंने एक काम और किया। अपने गुरुजी के पास ले जाकर उन्हें गुरुमंत्र दिला लाए, सुर्जकुमार और अपने भतीजे बदलूप्रसाद का भविष्य सुखी बनाने के लिए उन्होंने गढ़ाकोला वाला घर नये सिरे से बनवाया। नया घर भी कच्चा था, पर बड़ा था और परिवार के रहने लायक था।

सुर्जकुमार के दिन मज़े में कट रहे थे। स्कूल में भर्ती होने से उनके खेलकूद में कोई तब्दीली न हुई थी। मुहल्ले में लड़कियाँ हैं, उन्हें देखना अच्छा लगता है, सुर्जकुमार यह समझने लगे थे। कोर्स की किताबें अच्छी न लगती थीं पर इंद्रजाल की पोथी पढ़कर मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण के बारे में वह बहुत कुछ जान गए थे। एक दिन इन्द्रजाल की पोथी के अनुसार उन्होंने मंत्र सिद्ध करने का विचार किया। रात के नौ बजे होंगे। वह भाभी की कोठरी में थे कि छछूँदर दिखाई दी। उन्होंने उठकर तुरंत किवाड़ बंद किए, फिर धोती उतारकर फेंक दी, हाथ में जूता लेकर छछूँदर के पीछे दौड़ने लगे। उल्टे जूते से छछूँदर मारनी थी। बड़ी मुश्किल से मार पाए। फिर हाँडी में भरकर उसे बाहर गाड़ आए। लौटकर धोती पहनी।

स्त्रियों में चर्चा होने लगी कि सुर्जकुमार को मंत्र-सिद्ध* है, उनकी झाड़-फूँक से रोगी अच्छे हो जाते हैं। पड़ोस में सुकुलाइन नाम की युवती को यह सब ढोंग मालूम हुआ। उन्होंने अपनी शंका सुर्जकुमार की भाभी के सामने प्रकट की। भाभी ने सुर्जकुमार को ललकारा - "लोग कहते हैं, तुझे जंत्र-मंत्र कुछ नहीं आता, तू ढोंग करता है।" सुर्जकुमार ने सिद्ध पुरुष की तरह आत्मविश्वास से जवाब दिया, "जिसको विश्वास न हो, आज़मा ले।" भाभी ने कहा कि सुकुलाइन को अपनी करामात दिखाओ। सुर्जकुमार एक कनेर का फूल तोड़ लाए और बोले - "मैं मंत्र पढ़कर यह दूँगा। इसे लेना होगा। बस, इसके बाद मैं सिद्ध हूँ या नहीं, देख लेना।" भाभी फूल लेने से डरीं, सुकुलाइन से कहा, फूल ले लो। वह बोलीं, "फूल लेने से क्या होगा?" सुर्जकुमार ने जवाब दिया, "मंत्र के ज़ोर से हमेशा मेरे पीछे लगे रहना होगा। मैं जहाँ-जहाँ जाऊँगा, पीछे-पीछे जाना होगा।" सुकुलाइन की हिम्मत पस्त हो गई। भाभी से बोली, "भई, मैं बहन हूँ, मैं कैसे फूल ले लूँ? तुम भाभी हो, तुमको उतना दोष नहीं।" इस तरह कनेर का फूल दिखाने से ही सुर्जकुमार इस मारण-उच्चाटन युद्ध में विजयी हुए।

रामसहाय तक ये बातें पहुँची हों चाहे नहीं, कुलरीति के अनुसार पुत्र का ब्याह कर देना ज़रूरी था। अभी उम्र बारह के आस-पास थी, ब्याह की कोई जल्दी न थी, पर गाँव में लड़कों का ब्याह

इस उम्र तक कर दिया जाता था। डलमऊ में राम-दयाल द्विवेदी के यहाँ बात पक्की हुई। लड़की की उम्र करीब ग्यारह साल।

रामसहाय गाँव आए और सुर्जकुमार के ब्याह की तैयारी शुरू हो गई। सात सुहागिनों ने एक साथ मूसल पकड़कर धान कूटे, एक साथ दरेती का खूँटा पकड़कर उड़द दले। उड़द की दाल भिगोई गई। रामसहाय को बूढ़ी भौजाई के साथ चौके पर बिठाया गया। दोनों की गाँठ जोड़ी गई और दोनों ने दाल पीसने की रस्म पूरी की। फिर उड़द की धोई दाल के बड़े तले गये। गेरू से दरवाज़े पर माँई बनाई गईं, उन्हें बड़ी-भात खिलाया गया। हर रोज़ ढोलक बजती, गीत होते। नाइन सुर्जकुमार के उबटन लगाती। आखिर निकासी का दिन आया। सुर्जकुमार को हाथ-पैरों में कड़े पहनाये गये, गले में कंठा, पीली धोती, पीला जामा, पीली पगड़ी पहनाई गई। सिर पर मौर रखा गया। झैयम-झैयम करते बरात गढ़ाकोला से रवाना हुई।

डलमऊ पहुँचने पर बरातियों को मिर्चवान पिलाई गई, फिर नाश्ते के लिए पूड़ियाँ आईं। बरातियों ने हाथ-मुँह धोया, नाश्ता किया, कपड़े बदले। अगवानी हुई। हँसी-मज़ाक करते लोग फिर जनवासे लौट आए। कुछ देर बाद भाँवरों के लिए बुलावा अया। मंडप के नीचे पंडित ने मंत्र पढ़े, सुर्जकुमार और मनोहरादेवी की गाँठ जोडी गई। दोनों ने भाँवरें घूमीं। फिर देवताओं के सामने वर-वधू ने एक-दूसरे को दही-बताशे खिलाए। मनोहरादेवी घूँघट मारे थीं, सुर्जकुमार उनका मुँह देखने में असफल रहे। दूसरे दिन भात के समय सुर्जकुमार ने स्त्रियों को गालियाँ गाते सुना। शाम को छोटी बढ़ार और तीसरे दिन बड़ी बढ़ार के समय भी यह सिलसिला जारी रहा। ब्याह हो गया पर बहू अपने मायके ही रही। सुर्जकुमार पिता और बरातियों के साथ गढ़ाकोला वापस आए। वहाँ कुछ दिन रहने के बाद सब लोग फिर महिषादल आ गए।

सुर्जकुमार महिषादल में फिर पहले जैसा जीवन बिताने लगे। खेल-कूद में ज्यादा समय पहले ही जाता था, अब पढ़ने में मन और भी कम लगता। अब वह फुटबाल के अच्छे खिलाड़ी हो गये। तैरने में कुशल थे। नाटक देखने में उन्हें विशेष आनंद आता था। महल के पास ही नाट्यशाला थी जहाँ राजा सतीप्रसाद जब-तब नाटक कराते थे। बँगला नाटक 'तरुबाला ' में सुर्जकुमार ने एक 'हिंदुस्तानी' का पार्ट किया। कुछ दिन बाद वहाँ स्टार थियेटर आया। उसके रंगमंच की चमक-दमक, अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के ठाट-बाट देखकर सुर्जकुमार को लगा - सबसे बढ़िया जीवन इन्हीं का है। नाटक, खेल-कूद के साथ सुर्जकुमार ने अपने शरीर को सुदृढ़ और सुंदर बनाने की ओर ध्यान दिया। महिषादल का वातावरण ही ऐसा था। हर सिपाही थोड़ी-बहुत डंड-बैठक करता था। दूसरे राजा-रईसों की तरह महाराज सतीप्रसाद गर्ग के यहाँ भी अच्छे-अच्छे पहलवान थे। स्वयं महाराज सतीप्रसाद अपने पराक्रम के लिए प्रसिद्ध थे।

सुर्जकुमार कसरत करते, बादाम छानते, रामायण पढ़ते और मित्रों से गप लड़ाते। राजमहल के सामने जो बड़ी नहर थी, उस पर कलकत्ता जाने वाले स्टीमर देखते, किश्तियों में लोग माल ढोकर लाते, छोटा-सा बाज़ार, जैसा उन्होंने अपने गाँव से कुछ दूर पुरवा में देखा था, स्कूल के पास ताल के किनारे बैठकर मित्रों से सुनते, कैसे इसी मिदनापुर ज़िले में प्रसिद्ध उपन्यासकार बंकिमचन्द्र सरकारी अफसर थे और यहाँ अपने एक-दो उपन्यास भी उन्होंने लिखे थे। बंगाली जाति महान् है, बँगला भाषा के समान भारत की कोई भाषा नहीं है, रवीन्द्रनाथ संसार के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं, सुर्जकुमार बंगाली नहीं 'हिंदुस्तानी' हैं, यह सब ज्ञान एंट्रेन्स परीक्षा देने से पहले ही मित्रों ने उन्हें करा दिया। सुर्जकुमार बँगला की अपेक्षा हिंदी ही ज्यादा जानते थे। उनका मन भक्ति-साहित्य और शृंगार-रस की कविता, दोनों में ही रमता था। उन्होंने ब्रजभाषा की काफी कविता पढ़ डाली थी। पद्माकर उनके प्रिय कवि थे। उनकी सानुप्रास शब्दावली, शृंगार-वर्णन में भी ओजगुण का पुट, सुर्जकुमार को विशेष पसंद था। पद्माकर के शृंगार-वर्णन की चित्रमयता उनका मन मोह लेती थी। स्मरण-शक्ति अच्छी थी, विशेषकर जहाँ शब्द-योजना सुंदर हो और शृंगार के चित्र खींचे गये हों। सुंदर कवि ने राजा की लड़की विद्या से प्रेम किया, राजा ने उसे प्राणदंड दिया। जब प्रहरी उसे सूली देने ले जा रहे थे तब वह अपने और विद्या के प्रेम-संबंध पर छंद पढ़ता हुआ राजाप्रासाद के सामने से निकला। उनमें एक छंद यह था :

अद्यापि तां कनकचम्पकदामगौरीम्
फुल्लारविन्दनयनां तनुरोमराजिम्।
सुप्तोत्थितां मदनविह्वलितां लसांगीम्
विद्यां प्रमादगलितामिव चिन्तयामि।

राजा ने छंदों पर मुग्ध होकर प्राणदंड की अज्ञा रद्द कर दी। सुर्जकुमार को 'विद्या सुंदर' की कहानी बहुत पसंद आई। 'चौर पंचाशिका' का उपर्युक्त छंद वह खूब रस लेकर गुनगुनाते रहते।

ब्याह हुए दो वर्ष बीत गये थे। सोलह के नज़दीक पहुँच रहे थे। लोग कहते थे, कंठ फूट आया, मसें भीगने लगीं, बगलें निकल आईं, अब गौना कर देना चाहिए। सुर्जकुमार अपनी रानें देखते, बोतल जैसी ढली हुई लगतीं। कमर बालिश्त भर, सीना खूब चौड़ा, सिर पर घने काले बाल, गोरा रंग, मदभरी आँखें, सुर्जकुमार अपनी ही छवि पर मुग्ध हो जाते। साथ ही कनकचम्पकदामगौरी विद्या का चित्र भी आँखों के सामने घूम जाता। रामसहाय तेवारी ने तै किया कि लड़के का गौना कर देना चाहिए और बहू को महिषादल ले आना चाहिए।

पुत्र को लेकर रामसहाय गढ़ाकोला पहुँचे, वहाँ से गौना लेने डलमऊ गए। सुर्जकुमार की ससुराल में इस बात की बड़ी चर्चा थी कि गौने के बाद बिटिया परदेस बड़ी दूर बंगाल - चली जाएगी। वर-वधू की गाँठ जोड़कर उनसे जब पूजा कराई जा रही थी, तब घर की एक वृद्धा ने कहा, "दामाद जवान, बिटिया जवान, परदेस ले जाते हैं तो ले जाने दो।" लोग उन्हें जवान समझते हैं यह जानकर सुर्जकुमार को विशेष प्रसन्नता हुई। गौना हुआ। बहू को बिदा कराके रामसहाय गाँव आये। दुर्भाग्य से वहाँ उन दिनों प्लेग की बीमारी फैली हुई थी। लोग घरों से निकलकर बाग में झोंपड़े डालकर रहते थे। महुए के पेड़ के नीचे एक झोंपड़े में सुर्जकुमार का बिस्तर लगाया गया। जीवन में पहली बार उन्हें नारी-देह के स्पर्श का सुखद अनुभव हुआ। मनोहरादेवी कुल तेरह साल की थी।

गौना लेकर आये अभी चार-पाँच दिन ही बीते थे कि सुर्जकुमार के ससुर अपनी बिटिया बिदा कराने आ पहुँचे। गाँव में बीमारी फैली है यह उन्हें मालूम था। बेटी को बहुत प्यार करते थे, डर था कि महामारी में उसे कुछ हो न जाये। लड़की के यहाँ लोग खाते नहीं हैं, रामदयाल दुबे ने गढ़ाकोला में पानी भी न पिया। बिदा के लिए जल्दी की। रामसहाय को बहुत बुरा लगा। बंगाल से इतना रुपया खर्च करके आये हैं, लड़का पाँच दिन भी बहू के साथ न रह पाया। दुबे लड़की के स्वास्थ्य की चिंता के कारण इतनी जल्दी आये हैं, यह सोचकर उन्हें और भी क्रोध आया। आखिर महामारी का डर उनके बेटे के लिए भी है। बिटिया के लिए बड़ा डर लगा, दामाद के बारे में कछ न सोचा। क्रोधी स्वभाव के थे ही। बोले - ले जाओ अपनी बिटिया, हम लड़के का दूसरा ब्याह कर लेंगे। दुबेजी कुछ ऊँचा सुनते थे। समधी की पूरी बात समझे बिना बिटिया को बिदा कराके चल दिये। पर बिटिया ने सारी बात सुनी और समझ ली थी।

मनोहरादेवी से उनकी माँ पार्वतीदेवी ने सब हाल सुना तो बहुत परेशान हुईं। मेरी दो दाँत की लड़की, उसके सामने दूसरे ब्याह की बात! उन्होंने पंडित रामसहाय के नाम चिट्ठी भिजवाई, कसूर के लिए माफी माँगी, दामाद को गवहीं देने के लिए निमंत्रित किया। गौना हो जाने के बाद गवहीं की रस्म होती है। वर ससुराल जाकर कुछ हफ्ते या महीने वहाँ रहता है। फिर बहू को बिदा कराके अपने घर आता है।

रामसहाय को प्रस्ताव पसंद आया। लड़के से ससुराल जाने को कहा। समधी से बदला लेने के लिए ताकीद कर दी, यहाँ से तिगुना खाना। सुर्जकुमार ससुराल जाने को तैयार बैठे थे। पिता की आज्ञा तुरंत स्वीकार कर ली। कहा कि घी और बादाम की मात्रा तिगुनी कर देंगे। अफसोस इस बात का किया कि वहाँ बेदाना मिलता नहीं, वर्ना शरबत में ही रोज़ तीन रुपये खर्च करा देते। रामसहाय ने सुझाया, रूह की मालिश कराना रोज़, होश दुरुस्त हो जाएँगे। बाप-बेटे घुल-घुलकर बतियाने लगे, रामदयाल दुबे को कैसे छकायें, इस बारे में दोनों ने षड्यंत्रकारियों की तरह योजना बनाई। इस समय उन्हें देखकर कोई यह न कहता कि इन्हीं रामसहाय ने कभी बेटे की मरम्मत भी की होगी।

गवहीं की तैयारी हुई। बक्से में घराऊ कपड़ों के अलावा एक जोड़ी जूते भी रख लिये। बैसवाड़े की धूल में जूते बेआब हो जाते, ससुराल में पहनने लायक न रहते। डलमऊ कलकत्ता न था पर गढ़ाकोला को देखते तो कस्बा था। सुर्जकुमार को अपनी नागरिक सभ्यता से ससुराल वालों को प्रभावित करना था, वह बैसवाड़े के कोई ऐसे वैसे देहाती हूस नहीं हैं, यह बताना था। बंगाली ढंग से कीमती शांतिपुरी धोती बाँधी, उस पर कमीज़ पहनी, छाता लिया और स्टेशन के लिए रवाना हुए। गाड़ी शाम के चार बजे आती थी पर स्टेशन दूर था, इसलिए ढाई बजे घर से निकले। बैलगाड़ी का इंतज़ाम न था, पैदल ही स्टेशन चले। चन्द्रिका लोध को खिदमतगार बनाकर पहले ही सामान के साथ स्टेशन भेज दिया था।

सूरज डूबते डलमऊ स्टेशन आया। चन्द्रिका से सामान उठवाकर चले तो गेट पर टिकट-क्लेक्टर के पास एक नौजवान ने पूछा, कहाँ जाइएगा? शेरंदाज़पुर का नाम सुनकर उसने कहा, आइये हमारा इक्का है। किसके यहाँ जाना है, यह भी उसने मालूम कर लिया। सुर्जकुमार ने देखा, चिकनाई जुल्फों पर दुपलिया टोपी लगाये, मूँछें ऐंठे, चिकन के कुर्ते पर वास्कट पहने, हाथ में बेंत लिये गाँव का छैला जैसा लगता है। उन्होंने यह भी नोट किया कि वह भी काली मखमली किनारे की कलकतिया धोती पहने है। पैरों में मेरठी जूते हैं। इस व्यक्ति का नाम पथवारीदीन भट्ट उर्फ कुल्ली भाट था।

सुर्जकुमार किसके इक्के पर बैठकर आये हैं, यह समाचार उनके ससुराल पहुँचने के साथ-साथ सास को मिल गया। गलीचा-बिछे पलँग पर बैठे ही थे कि उन्होंने पूछा, क्यों भइया तुम कुल्ली के एक्के पर आये हो? उन्हीं के इक्के पर आये हैं, बात पक्की होने पर सास ने लम्बी साँस ली। सुर्जकुमार के लम्बे लहराते बाल और कोंछदार धोती देखकर बैसवाड़े के लोग यही कहते - जनाना है। वही भाव सास का था। शरबत-पानी के बाद उन्होंने रामसहाय की तीखी आलोचना की, अगर उन्होंने सुर्जकुमार का दूसरा ब्याह कर दिया तो इससे पिता-पुत्र की जो दुर्गति होगी - इस जन्म में और उसके बाद - उसका सजीव चित्र खींच दिया। साथ ही उन्होंने अपनी पुत्री के रूप गुण की प्रशंसा भी काफी की। दामाद को पढ़ाते हुए कहा - मैंने तुम्हारा ही मुँह देखकर ब्याह किया है, तुम्हारे पिता की तोंद देखकर नहीं।

सुर्जकुमार आज्ञाकारी दामाद की तरह सब-कुछ सुनते रहे। पिता का पक्ष लेकर उन्होंने लड़ाई करना उचित न समझा। पिता ने दूसरे ब्याह की धमकी देकर ठीक किया है, ऐसा दृढ़ विश्वास भी उन्हें नहीं था। रात में पत्नी के आने पर दिये के प्रकाश में पहली बार उन्होंने मनोहरादेवी की छवि देखी। पर माँ की तरह बेटी ने भी सवाल किया, 'तुम कुल्ली के एक्के पर आये हो?'

सबेरा होते ही कुल्ली आकर सुर्जकुमार को पूछ गये। अभी वह सो रहे थे। सास ने दामाद को चेतावनी दी, उनके साथ रहने पर तुम्हारी बदनामी हो सकती है। इससे मिलो, उससे न मिलो - यह सब सुर्जकुमार को अच्छा न लगता था। गढ़ाकोला में बाप कहते थे, पतुरिया के लड़कों से न मिला करो, यहाँ सास कहती हैं, कुल्ली से न मिल। पर ऐसे लोगों से मिलने में ही उन्हें विशेष आनंद आता था। कुल्ली आये, डलमऊ के इतिहास के बारे में बात कीं। शाम को गंगा का घाट, पुराना किला वगैरह दिखाने को कहा। सास ने मना किया पर इन्होंने ज़िद की। सास ने चन्द्रिका को साथ भेज दिया।

कुल्ली ने इशारा किया चन्द्रिका को बिदा कर देना चाहिए। सुर्जकुमार ने उसे रूह खरीदने भेज दिया। किले में एक स्थान उन्हें बहुत पसंद आया। काफी ऊँचाई पर बारहदरी बनी थी और नीचे गंगा बहती थी। नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ बनाई गई थीं जिनमें कुछ अब भी बची हुई थीं। कुल्ली ने सुर्जकुमार से गाने को कहा। गले की तारीफ की। 'पान भी क्या खूबसूरत बनाता है तुम्हें! तुम्हारे होंठ भी गज़ब के हैं। पान की बारीक लकीर, क्या कहूँ, शमशेर बन जाती है।' कुल्ली के प्रशंसा-वाक्य सुनकर सुर्जकुमार प्रसन्न मन घर लौटे। रास्ते में चन्द्रिका को समझा दिया, तुम्हारी नानी पूछें तो कहना, हम साथ थे।

सास को यह पता लगाते देर न हुई कि सुर्जकुमार किला देखने गए तब चन्द्रिका साथ न था। उन्होंने डण्डा उठाकर चन्द्रिका से कहा, 'देख, दहिजार लोध! भले आदमी की तरह ठीक-ठीक बता, नहीं तो वह डण्डा दिया कि मुँह टेढ़ा हो गया।'

चन्द्रिका अपने मालिक सुर्जकुमार को पकड़कर रोने लगा। बोला - 'बाबा, मैं न रहूँगा।' पूछने पर मालूम हुआ कि चन्द्रिका को रूह लेने के बहाने अलग करने का राज़ सास को मालूम हो चुका है। सुर्जकुमार ने तै किया, दबना नहीं है। चन्द्रिका से रूह की मालिश करने को कहा। चन्द्रिका जब सुर्जकुमार के सीने पर रूह मल रहा था, तभी ससुर रामदयाल दुबे खुशबू के सहारे आ पहुँचे और बोले, 'अरघानें उठ रही हैं बच्चा! इतना इत्र-फुलेल न लगाया करो।' सास ने आकर पूछा, रूह की मालिश से क्या होता है? दामाद ने जवाब दिया, सीना तगड़ा होता है। इस पर उन्होंने बड़ा टेढ़ा सवाल किया, 'तुम्हारे पिताजी तनख्वाह कितनी पाते हैं?' तनखाह इतनी कम थी कि सुर्जकुमार सही बात कहने में शरमाये। कूटनीति का सहारा लेकर बोले, 'पिताजी की आमदनी की कितनी सूरतें हैं क्या कहूँ! उनकी आमदनी कब कितनी हो जाएगी, कहाँ से, कैसे, किससे, यह वही नहीं बता सकते।' इस पर सास रोने लगीं। रामसहाय रूह से बेटे की मालिश करायें पर उनकी बेटी के लिए चढ़ावा ऐसा मामूली लाए! ऐसे घर में बेटी ब्याहने पर खुद ही पछताने लगीं - 'अरे राम रे! मुझे क्या हो गया, जो मैंने शादी की!'

रात को पत्नी ने विरोध किया। इत्र-फुलेल लगाना किसान परिवारों में अच्छा न समझा जाता था। मनोहरादेवी ने कहा, इत्र की इतनी तेज़ खुशबू है कि शायद आज आँख न लगेगी। सुर्जकुमार ने चुटकुला सुनाया। एक मछुआइन को नदी से लौटते देर हो गई, रास्ते में राजा की फुलवारी पड़ती थी, उसी में सो रही, पर फूलों की महक से नींद न आई। मछली वाली टोकरी सिरहाने रखी, तब नींद आई। पत्नी ने बिगड़कर कहा, 'तो मैं मछुआइन हूँ? मैं मछली-कलिया खाती हूँ?' सुर्जकुमार ने जवाब दिया, 'अपने बाल सूँघो। तेल की ऐसी चीकट और बदबू है कि कभी-कभी मालूम देता है कि तुम्हारे मुँह पर क़ै कर दूँ।' मनोहरादेवी ने और तेज़ होकर कहा, 'तो क्या मैं रण्डी हूँ जो हर वक्त बनाव-सिंगार के पीछे पड़ी रहूँ?' और वह उठकर चल दीं।

सुर्जकुमार ने गाँव में पतुरिया का शृंगार देखा था। यद्यपि वह उम्र में बहुत बड़ी थी और उसके लड़के भी सुर्जकुमार से बड़े थे, फिर भी थी तो वह पतुरिया। वह गाँव की स्त्रियों से अलग निखर-सँवर कर रहती थी। उसके अलावा महिषादल में गायिकाओं, सुंदर स्त्रियों की कमी न थी,

उनकी प्रसाधन-कलाँ को गाँव की स्त्रियाँ कहाँ पातीं? मनोहरादेवी ने अपने पति की रुचि भाँपकर ही मानो कहा था, तो क्या मैं रण्डी हूँ जो बनाव-सिंगार के पीछे पड़ी रहूँ?

सुर्जकुमार को लग रहा था, पत्नी उनके अधिकार में पूरी तरह नहीं आ रही। एक दिन उनका गाना सुना, लोगों को उनके गाने की प्रशंसा करते सुना। जिसे देखो वहीं मनोहरादेवी की चर्चा कर रहा था, मानो सुर्जकुमार उस घर में हों ही नहीं। मनोहरादेवी ने भजन गाया :

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभयदारुणम्।

तुलसीदास की शब्द-योजना इतनी सुंदर है, सुर्जकुमार के ध्यान में यह बात पहले न आई थी। जब मनोहरादेवी ने गाया :

कन्दर्प अगणित अमित छवि नवनीलनीरज सुन्दरम्!

तब सुर्जकुमार को लगा, गले में मृदंग बज रहा है।

मनोहरादेवी के कंठ से तुलसीदास का यह छंद सुनकर सुर्जकुमार के न जाने कौन-से सोते संस्कार जाग उठे। साहित्य इतना सुंदर है, संगीत इतना आकर्षक है, उनकी आँखों ने जैसे नया संसार देखा, कानों ने ऐसा संगीत सुना जो मानो इस पृथ्वी पर दूर किसी लोक से आता हो। अपनी इस विलक्षण अनुभूति पर वह स्वयं चकित रह गए। अपने सौंदर्य पर जो अभिमान था, वह चूर-चूर हो गया। ऐसा ही कुछ गायें, ऐसा कुछ रचकर दिखायें, तब जीवन सार्थक हो। पर यहाँ विधिवत् न साहित्य की शिक्षा मिली, न संगीत की।

सुर्जकुमार को पढ़ाई का ध्यान आया। बिदा कराके गाँव आए, गाँव से महिषादल। स्कूल जाने का क्रम फिर शुरू हुआ। अब एक कठिनाई और हो गई थी, किताब लेकर बैठते तो पृष्ठों से अक्षर गायब हो जाते और उनकी जगह मनोहरादेवी की छवि तैरने लगती। पद्माकर के कवित्तों का अर्थ अब और भी अच्छी तरह समझ में आने लगा। एन्ट्रेंस परीक्षा के दिन नज़दीक आए। परीक्षा में पास न हो पायेंगे, सुर्जकुमार को निश्चय हो गया था। गणित के दिन वह कापी में पद्माकर के शृंगार रस वाले कवित्त लिखकर घर चले आये।

जैसे-जैसे परीक्षाफल निकलने के दिन पास आने लगे, वैसे-वैसे सुर्जकुमार के मन में शृंगार के बदले वैराग्य के भाव उदय होने लगे। रामायण का पाठ वह और भी मनोयोग से करने लगे। पर इससे कोई लाभ न हुआ। सफल विद्यार्थियों में कहीं उनका नाम न था। रामसहाय तेवारी ने समझ लिया, लड़का आवारा हो गया, सज़ा दिए बिना काम न चलेगा। बुलाकर कहा, जो कुछ पढ़ना था, पढ़ चुके, हमने अपना फर्ज़ पूरा किया, अब अपनी मेहरिया संभालो और कमाओ-खाओ।

उन्होंने बहू का सारा गहना रखवा लिया, सुर्जकुमार के धराऊ कपड़े रखवा लिये। भाग्य के सहारे कमाने-खाने के लिए घर से बाहर कर दिया। सुर्जकुमार के मन को एक चोट लगी परीक्षा में फेल होने की। खैर, पास होने की तो वैसे भी बहुत आशा न थी। दूसरी चोट अब यह घर से निकाले जाने की, वह भी अकेले नहीं, पत्नी के साथ। कहाँ जाएँ, किससे नौकरी माँगें? महिषादल छोड़ अभी दूसरी जगह विशेष परिचय न था। कलकत्ते में इधर-उधर भटकने पर कुछ-न-कुछ काम मिल जाता पर पत्नी को लिये-लिये कहाँ घूमें? एक ही रास्ता था। किसी तरह ससुराल पहुँचकर वहीं शरण लें। सुर्जकुमार दुखी मन से पत्नी को लिये डलमऊ पहुँचे। सास ने सारा हाल सुना, सहानुभूति प्रकट की। रामसहाय के व्यवहार से वह पहले ही नाराज़ थीं, वह जंगली हूस हैं, इस घटना से उनकी यह राय और भी पक्की हो गई। सुर्जकुमार पिता की आलोचना सुनकर चुप रहे। जिस घर में रूह की मालिश कराके उन्होंने अपनी नागरिक सभ्यता का परिचय दिया था, उसी में दीन-मलीन वेश में निठल्ले दामाद की तरह उन्हें आश्रय लेना पड़ा। अब उनसे कहने की ज़रूरत न थी, कुल्ली के यहाँ मत जाना। कुल्ली का साथ करके वह सास को नाराज़ न करना चाहते थे। पार्वती देवी काफ़ी सहानुभूति से पेश आईं। बेटी के लिए नए सिरे से गहने और दामाद के लिए कपड़े बनवाए, और बातें दर-किनार, कस्बे में खुद अपनी इज्ज़त का सवाल था।

सुर्जकुमार भविष्य की चिंता करना छोड़कर पत्नी के साथ सुख से दिन बिताने लगे। अब उन्हें उनके बालों या वेशभूषा से कोई शिकायत न रही। उनकी पत्नी कितनी कर्मठ है और वह स्वयं कितने निकम्मे हैं, इसका बोध उन्हें होने लगा। छह महीने बीत गए। बाप-बेटा दोनों ज़िद्दी। आखिर रामसहाय तेवारी ही झुके। खुद डलमऊ आए और बेटे-बहु को गाँव लिवा लाए।

मनोहरादेवी साध्वी महिला थीं। उनकी माँ लम्बे कद, गौरवर्ण की सतेज व्यक्तित्व वाली देवी थीं। माँ के समान मनोहरादेवी सुंदर थीं। पर वह अपना समय शृंगार-प्रसाधन में न खर्च करती थीं। उस समय तक गाँव में क्रीम-पाउडर की पहुँच न हुई थी। मनोहरादेवी रोटी बनातीं, बर्तन माँजतीं, टोला-पड़ोस के लोगों के लिए चिट्ठी लिखतीं। इन चिट्ठी लिखाने वालों में एक साँवला चमार युवक था - चतुरी। वह दहलीज़ में बैठकर रामायण पढ़तीं, बाहर चबूतरे पर सुर्जकुमार के काका रामलाल बैठकर सुना करते। कभी-कभी वह भजन गातीं और चतुरी भी मगन मन सुनता रहता।

सुर्जकुमार को एक दिक्कत थी। मनोहरादेवी शाकाहारी थीं और सुर्जकुमार को गोश्त खाने का शौक था। वैसे वह गुरुमुख हो चुके थे पर लाड़-प्यार में पले बेटे ने मन की इच्छाओं का दमन करना न सीखा था। मनोहरादेवी ने कहा - 'विश्राम-सागर में लिखा है कि माँस खाने से बड़ा पाप होता है, तुम मांस खाना छोड़ दो।' उनके कहने से सुर्जकुमार ने मांस खाना छोड़ दिया। मांस छोड़ने के कारण हो अथवा पत्नी के साथ रहने से हो, सुर्जकुमार बहुत दुबले हो गए। एक दिन उघारे बदन जब नहाने जा रहे थे, तब गाँव के एक बूढ़े पंडितजी ने इन्हें देखकर ताज्जुब से कहा - 'तुम क्या हो गए?' सुर्जकुमार ने जवाब दिया, 'मांस छोड़ दिया, इसलिए दुबला हो गया हूँ।' उन्होंने पूछा, 'तो मांस क्यों छोड़ा? इन्होंने बताया विश्रामसागर में लिखा है, बड़ा पाप होता है, मरने पर मांसाहारी को यम के दूत बड़ा दण्ड देते हैं।' पंडितजी ने पूछा, 'तुमने अपनी इच्छा से छोड़ा या किसी के कहने पर, सुर्जकुमार ने बताया कि पत्नी के उपदेश से ऐसा किया है। पंडित जी ने कहा, 'तो फिर तुम खाओ। कनवजियो को पाप नहीं होता। उनको वरदान है।' इन्होंने जिज्ञासा की, 'कहीं लिखा भी है?' पंडितजी ने विश्वासपूर्वक कहा, 'हाँ, है क्यों नहीं? वंशावली में लिखा है।'

सुर्जकुमार चिकवे के यहाँ गए और आधा सेर मांस ले आए। रूमाल में खून के धब्बे देखकर मनोहरादेवी ने पूछा, 'यह क्या है?' उत्तर मिला, 'मांस।' उन्होंने पूछा, 'तो फिर खाओगे?' सुर्जकुमार ने कहा, 'हाँ, हमें वरदान है। वंशावली में लिखा है।' मनोहरादेवी ने कहा, 'अपने मांस वाले बरतन अलग कर लो। जिस दिन मांस खाओ, उस दिन न मुझे छुओ और न घर के और बरतन। तीन दिन तक कच्चे घड़े न छू पाओगे।' सुर्जकुमार ने कहा, 'इस समय तो रोज़ खाने का विचार है क्योंकि पिछली कसर पूरी करनी है।' मनोहरादेवी ने कहा, 'तो मुझे मेरे मायके छोड़ आओ।' सुर्जकुमार ने जवाब दिया, 'लिख दो कोई ले जाए, नहीं तो नाई भेज दो, किसी को बुला लाए। मैं जहाँ मांस पकाता हूँ वहाँ दो रोटियाँ भी ठोंक लूँगा।' मनोहरादेवी मायके चली गईं।

सन् 14 की लड़ाई शुरू हो गई थी। देश में महँगाई बढ़ रही थी। रामसहाय बुढ़ा रहे थे पर सुर्जकुमार को अभी घर का भार उठाने की कोई फिक्र न थी। इसी साल कुँवार के महीने में मनोहरादेवी ने मायके में ही पुत्र को जन्म दिया। रामसहाय अब बाबा हुए। पोते के जन्म पर उन्होंने धूमधाम से उत्सव किया। सुर्जकुमार की ज़िम्मेदारी बढ़ गई। लेकिन जब तक रामसहाय जिए, इन्होंने घर-गृहस्थी की कोई चिंता न की। अब स्कूल जाना भी बंद था। कसरत, खेलकूद, सैर-सपाटा, स्वेच्छानुसार अध्ययन - यही जीवन-क्रम था।

रामसहाय का शरीर शिथिल हो रहा था, पेट बढ़ गया था। डॉक्टरों ने कहा, हर्निया है। महिषादल के अस्पताल में उनका आपरेशन हुआ। आपरेशन सफल हुआ पर रामसहाय पूरी तरह स्वस्थ फिर भी नहीं हुए। वह गाँव चले आये। सलेथू जिला उन्नाव की एक स्त्री, जिसका परिवार महिषादल में था, गौरी की माँ के नाम से प्रसिद्ध, गढ़ाकोला में उनकी देखभाल करती रहीं। सन् 17 में मनोहरादेवी ने दूसरी संतान, कन्या सरोज़ को जन्म दिया। उसी वर्ष रामसहाय तेवारी का देहांत हुआ।

सुर्जकुमार को अब अपने उत्तरदायित्व का बोध हुआ। उम्र उन्नीस साल, दो बच्चों के बाप, पिता अब नहीं हैं, उन्हें अब दूसरों के सहारे जीने का अधिकर नहीं है - यह सब उनकी समझ में अपने-आप आ गया। इसके सिवा पिता के न रहने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि बुढ़ऊ उन्हें कितना प्यार करते थे! माँ के न रहने पर माँ-बाप वह दोनों थे। जो कुछ कमाया था, वह सब सुर्जकुमार के लिए। गाँव से इतनी दूर परदेस में और किसके लिए मस-खप रहे थे? क्रोध आने पर कई बार उन्होंने मारा भी था, पर यह भी सुर्जकुमार के भले के लिए। उन्होंने लाड़-प्यार भी कम न किया था। देशी रियासत में सिपाहियों के मामूली जमादार की हैसियत ही क्या? पर उन्होंने सुर्जकुमार को राजकुमारों की तरह रखा। कौन जनेऊ, ब्याह, गौने के लिए बंगाल से बैसवाड़े के दरिद्र गाँव में आकर इतना पैसा खर्च करता है? गाँव में किस नौजवान को शंतिपुरी धोती और पम्पशू पहनने का सौभाग्य मिलता है? बादाम और बेदाना कितनों को मयस्सर होता है? उस पर इत्र-फुलेल, नाटक-तमाशे, सैर-सपाटा! यह सब रामसहाय तेवारी की बदौलत। अब वह साया उठ गया था।

बाप की सेवाओं का विचार करके राजा सतीप्रसाद गर्ग ने सुर्जकुमार को अपने यहाँ नौकर रख लिया। सिपाही के बेटे को उन्होंने सिपाहियों में भर्ती नहीं किया। सुर्जकुमार बाप से ज्यादा पढ़े-लिखे थे। उन्हें चिट्ठी-पत्री, तहसील-वसूली, कचहरी-अदालत से संबंधित काम मिल गया। तनखाह मामूली थी, पर चचेरे भाई बदलूप्रसाद भी यहीं नौकर थे, खर्च चल जाता था। सुर्जकुमार अब राजा के और निकट सम्पर्क में आये। एक नाटक में सुर्जकुमार को संस्कृत श्लोक पढ़ने का छोटा-सा पार्ट दिया गया। राजा को इनका श्लोक-पाठ पसंद आया। उन्होंने अपने यहाँ के एक राज-कर्मचारी को आज्ञा दी कि वह सुर्जकुमार को गाना सिखाया करें। सुर्जकुमार ने भी अब राजा को निकट से देखा। कद में सुर्जकुमार से कई इंच छोटे हैं। रंग हल्का साँवला है, होंठ मोटे हैं, नीचे का होंठ आगे को कुछ निकला हुआ है। सुर्जकुमार से ज्यादा सुंदर नहीं हैं पर चेहरे से तेज झलकता है, और हाथ-पैर भी फौलाद के हैं। राजा ब्राह्मण हैं, नौकर-चाकर, रिआया-आसामी ज़मीन में लेटकर, उनके चरणों में माथा टैककर,

साष्टांग दण्डवत् करते हैं - उन्होंने देखा। हुजूर कहे बिना उनसे बात करना गुस्ताखी में शामिल है। नौकरी और आत्म-सम्मान में परस्पर क्या संबंध है, सुर्जकुमार को मालूम होने लगा।

एक दिन सुर्जकुमार को तार मिला - तुम्हारी स्त्री सख्त बीमार है, फौरन आओ। सुर्जकुमार ने तुरंत डलमऊ के लिए कूच किया। राम-राम करते जब ससुराल पहुंचे, तब मालूम हुआ, मनोहरादेवी पहले से चिता में जल चुकी हैं। फेफड़े कफ़ से जकड़ गये थे। डॉक्टर ने पानी की जगह यखनी पिलाने को कहा था। पर यखनी पीना-तो दूर, मनोहरादेवी ने अंग्रेज़ी दवा पीने से भी इंकार कर दिया। कहा - दस बार नहीं मरना है, कौन धरम बिगाड़े?

चार साल के रामकृष्ण, साल-भर की सरोज - दोनों संतानों को वहीं उनकी नानी के पास छोड़कर सुर्जकुमार अपने गाँव चले। अभी गाँव पहुँचे न थे कि देखा, लोग बड़े भाई बदलू की लाशा लिये जा रहे हैं। सुर्जकुमार को चक्कर आ गया। राह में वहीं सिर पकड़कर बैठ गये। किसी तरह पहुँचे तो देखा, भौजाई बीमार हैं। उन्होंने पूछा, 'तुम्हारे दादा को कितनी दूर ले गये होंगे?' सुर्जकुमार से कुछ जवाब देते न बन पड़ा। काका रामलाल भी बीमार थे, भतीजे को देखकर बोले, 'तू यहाँ क्यों आया?' सुर्जकुमार ने कहा, 'आप अच्छे हो जाएँ तो सबको लेकर बंगाल चलूँ।'

बदलूप्रसाद के पाँच बच्चे थे - चार लड़के और एक दूध-पीती बच्ची। बड़ा लड़का महिषादल में सुर्जकुमार के साथ रहता था, बाकी तीन गांव में थे। बड़े भाई के देहांत के तीसरे दिन भाभी भी गुजर गई। दूध-पीती बच्ची अकेली रह गई। सुर्जकुमार रात को उसे अपने पास लिटाकर सोये। घर में बिल्ली उछल-कूद मचाये थी। सुर्जकुमार को नींद न आई। सबेरे उठकर देखा तो खाट पर लेटी बच्ची का शरीर ठंडा था। सुर्जकुमार ने बच्ची का शव उठाया। उसे नदी किनारे ले गये। गड्ढा खोद कर उसे गाड़ा, फिर घर लौटे। इसके बाद काका रामलाल का देहांत हुआ। बदलूप्रसाद के लड़के बीमार हुए पर सौभाग्य से अच्छे हो गए। मृत्यु-लीला समाप्त हुई। परिवार में रह गए सुर्जकुमार और उनके चचेरे भतीजे, पुत्र और कन्या ननिहाल में थे।

ज़िंदगी का यह दौर एक भयानक सपने जैसा था। सारा कुनबा ही उजड़ गया। अब सर पर किसी का साया नहीं। रामसहाय-रामलाल की पीढ़ी तो खत्म हो ही गई, बदलू-सुर्जकुमार की पीढ़ी में भी अकेले सुर्जकुमार रह गये। एक आदमी की कमाई से इतने बच्चों का खर्च कैसे चलेगा? इतनी मौतें एक साथ देखकर कोई अपने औसान* कैसे कायम रखे? कोई ऐसी पाठशाला नहीं जहाँ ऐसी परिस्थिति का सामना करने की शिक्षा आदमी को पहले से दी जा सके। फिर सुर्जकुमार के दिन लाड़-प्यार में बीते थे। ज़िंदगी के बीस साल निश्चित बिताने के बाद सर पर यह आफ़त का पहाड़ ही टूट पड़ा।

सबसे बड़ा धक्का लगा, मनोहरादेवी के गुज़र जाने का। उनके विवाहित जीवन की शुरुआत अब होनी चाहिए थी पर शुरू होने के बदले उसका अंत हो गया। मनोहरादेवी के जीवित रहते उन्होंने उनकी कद्र न की। गवहीं के दिनों उनके बालों को लेकर ताने कसे। गोश्त खाने के पीछे गढ़ाकोला में अपन साथ रहना दूभर* कर दिया। अपने निठल्लेपन के कारण एन्ट्रेंस परीक्षा पास न कर पाए, इससे अपने साथ उन्हें भी अपमानित कराके घर से निकले। पर वह कितनी उदार थीं। कभी पति या ससुर के रूखे व्यवहार की शिकायत न की। कितनी कम उम्र में संसार छोड़ गई। अभी अठारह की भी तो न थी। कैसा सुंदर कंठ, कैसा मृदुल स्वभाव, कैसा सात्विक सौंदर्य, सुर्जकुमार ने देखा, उनके हृदय में पत्नी के लिए अगाध प्यार है। यह प्यार अब तक क्यों न दिखाई दिया था? किस मोह ने उनकी आँखों पर पर्दा डाल दिया था? क्या मृत्यु ही यह पर्दा उठा सकती थी कि वह मनोहरादेवी की वास्तविक छवि देखें?

सुर्जकुमार गढ़ाकोला से डलमऊ गए। गंगा के किनारे रात-रात भर वह श्मशान में घूमा करते जहाँ मनोहरादेवी की चिता जली थी। दिन में वह अवधूत टीले पर बैठ जाते और गंगा में बहती हुई लाशें देखा करते। पत्नी और भाई के निधन के बाद अब मृत्यु का ऐसा कोई दृश्य न था जिसे सुर्जकुमार को भय होता। जीवन में जो सबसे वीभत्स और भयानक है, उसे भर आँखों देखना वह सीख गए थे।

एक दिन वह अवधूत टीले पर बैठे थे, तभी कुल्ली ने आकर कहा, 'मैं जानता हूँ, आप मनोहरा को बहुत चाहते थे। ईश्वर चाह की जगह मार देता है, होश कराने के लिए।'

सुर्जकुमार को ब्रह्मज्ञान मिला। वह अभी तक बेहोश थे। न अपने को समझते थे, न मनोहरा को, न संसार को। दुख के अंकुश द्वारा अब ब्रह्म ने उन्हें अपना और संसार का ज्ञान कराया।

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभयदारुणम्।

कितना सुंदर भजन! दारुण* भव*भय को हरने वाला वही एक है राम। राम छोड़ कौन ऐसे समय मन को शांति दे सकता है।

सन् '20 में गाँधी जी ने असहयोग आन्दोलन शुरू किया। हिन्दुओं और मुसलमानों की मैत्री के अभूतपूर्व दृश्य देखे गए। दूर-दूर देहात तक चरखे का प्रचार होने लगा। बँगला पत्रों में सुर्जकुमार रूसी क्रान्ति और वहाँ एक नये समाज की रचना का हाल पढ़ते। महिषादल के आसपास के गाँवों में जाते; मित्रों के साथ वहाँ किसानों, जुलाहों आदि का संगठन करते, उन्हें स्वदेशी का महत्व समझते। हर जगह राष्ट्रीय गीतों की धूम थी। सुर्जकुमार बड़े प्रेम से ये गीत पढ़ते और गाते। उन्हें द्विजेन्द्रपाल राय के गाने विशेष रूप से पसन्द थे। उन्होंने स्वयं राष्ट्रीय गीत लिखने का विचार किया। सन् '20 के वसन्त में सुर्जकुमार ने जन्मभूमि पर एक गीत लिखाः

बन्दूँ मैं अमल-कमल -
घिर सेवित चरण युगल -
शोभामय शान्ति निलय पाप ताप हारी,
मुक्तबन्ध, घनानन्द मुद मंगलकारी।।
बधिर विश्व चकित भीत सुन भैरव वाणी।
जन्मभूमि मेरी है जगन्महारानी।।
मुकुट शुभ्र हिमागार।
हृदय बीच विमल हार -
पंच सिन्धु ब्रह्मपुत्र रवितनया गंगा।
विन्ध्य विपिन राजे घनघेरि युगल जंघा
बधिर विश्व चक्रित भीत सुन भैरव वाणी।
जन्मभूमि मेरी है जगन्महारानी।। त्रिदश कोटि नर समाज।
मधुर-कण्ठ-मुखर आज।।
चपल चरण भंग नाच तारागण सूर्यचन्द्र।
चूम चरण ताल मार गरज जलधि मधुर मन्द्र।।
बधिर विश्व चकित भीत सुन भैरव वाणी।
जन्मभूमि मेरी है जगन्महारानी।।

सुर्जकुमार का नया जीवन आरम्भ हुआ - कवि का जीवन। पर उन्हें अपना नाम सुर्जकुमार तेवारी ज़रा भी कवित्वपूर्ण न लगता था। इसे शुद्ध करके यदि सूर्य कुमार तेवारी कर दिया जाय, तब भी गिरीशचन्द्र घोष, द्विजेन्द्रलाल राय, बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय अथवा रवीद्रनाथ ठाकुर के नामों के मुकाबले वज़न में कुछ हल्का बैठता था। बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने अपना नया नाम रखा सूर्यकान्त त्रिपाठी। सूर्यकुमार से सूर्यकान्त नाम सुनने में और अर्थ के विचार से भी ज्यादा अच्छा लगा। बहुत-से तेवारी अपने को त्रिपाठी लिखने लगे थे। अब कुछ साहित्यकार अपना नाम शुद्ध रूप में लिखते थे जैसे महावीरप्रसाद दुबे अपने को महावीरप्रसाद द्विवेदी लिखते थे। जन्मभूमि की वन्दना से रामसहाय तेवारी के पुत्र सूर्यकान्त त्रिपाठी ने अपनी साहित्य-साधना आरम्भ की।

बोध प्रश्न - 2

1. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था?
   क) इलाहाबाद
   ख) महिषादल
   ग) गढ़कोला
   घ) कलकत्ता ( )

2. निरालाजी ने यह कथन किससे कहा था : 'तुम्हारे मातहत इतने सिपाही हैं, तुम इस राजा को लूट क्यों नहीं लेते?'
   क) मित्र से
   ख) पिता से
   ग) पड़ोसी से
   घ) बेटे से ( )

3. मनोहरा देवी से निराला को किस बात की प्रेरणा मिली? तीन-चार पंक्तियों में उत्तर दीजिए।
   .....
   .....
   .....
   .....
   .....

4. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के प्रिय कवि थे :
   (क) पदमाकर और तुलसीदास
   (ख) घनानंद और बिहारी
   (ग) भारतेन्दु और जयशंकर प्रसाद
   (घ) महादेवी और सुमित्रानंदन पंत ( )

5. निराला की बेटी का नाम क्या था?
   (क) मनोहरा देवी
   (ख) सरोज
   (ग) पार्वती देवी
   (घ) चन्द्रिका ( )

6. उन्होंने साहित्य सृजन के लिए अपना नाम क्यों बदला था?
   .....
   .....
   .....

17.6 'निराला की साहित्य साधना' का विश्लेषण

यहाँ हम जीवनी के उक्त अंश का वस्तु और शिल्प की दृष्टि से मूल्यांकन करेंगे। निराला जी बचपन से ही विद्रोही और अक्खड़ स्वभाव के थे। वे अपने वातावरण के प्रभाव के कारण सर्जन की अपेक्षा सजने पर अधिक बल देते थे। पत्नी के स्वभाव और त्याग ने उन्हें उदात्त भावनाओं की ओर मोड़ा। इस यात्राक्रम को रामविलास शर्मा ने बड़े ही सुंदर ढंग से चित्रित किया है।

17.6.1 प्रतिपाद्य

'निराला की साहित्य साधना' में रामविलास शर्मा ने महाकवि निराला का संपूर्ण जीवन-चरित्र प्रस्तुत किया है। निराला के पुरखों की देहरी वाले क्षेत्र अवध में गढ़ाकोला - को पहली बार देखकर सुर्जकुमार की मनोदशा का वर्णन लेखक ने विस्तारपूर्वक किया है। बंगाल की शस्य श्यामला धरती पर बिताए बचपन के बाद पहली बार सुर्जकुमार बेर और बबूल के जंगल, बड़े-बड़े ऊसर और गाँव के किनारे बहती क्षीण-सी लोन नदी को देखता है। बंगाल की तरह यहाँ भी आमों के बाग थे, लेकिन वैसी सघन हरियाली नहीं थी। महिषादल के राज दरबार में और उस समाज में ऊँच-नीच का जो भेद-भाव उसने देखा और अनुभव किया था, वह जैसे यहाँ और दृढ़ होता है। उसका अपना घर यहाँ भी वैसा ही टूटा-फूटा और कच्चा था जबकि जमींदार भगवानदीन दुबे का मकान पक्का और बड़ा था यद्यपि महिषादल में राजा के महल की तुलना में वह बिल्कुल टुच्चा था। इसी प्रकार सुर्जकुमार इस बात को नहीं समझ पाता कि जमींदार दुबे की मुसलमान पतुरिया-पत्नी के उसे अच्छी लगने पर भी उसके पास क्यों नहीं जाना चाहिए और उसकी छुई हुई चीज़ें क्यों नहीं खाना चाहिए। सुर्जकुमार ने यह भी देखा था कि पतुरिया मुसलमान है और उसके लड़के अपने को पंडित समझने के कारण, माँ होने पर भी, उसे भोजन दूर से देते हैं।

महिषादल में एक साधारण जमादार पिता के पुत्र होने का हीनता बोध सुर्जकुमार को परेशान करता है। इस छोटे मगर समृद्ध राज्य में राम सहाय तिवारी की हैसियत सिर्फ़ एक वफ़ादार सिपाही की थी - जो मालिक का नमक खाकर उसका हक अदा करने में विश्वास रखता था। लेकिन पिता की कद-काठी और आकर्षक व्यक्तित्व देखकर उसे स्वाभाविक रूप से गर्व होता है। बंगाल के गर्वनर सर फ्रांसिस ड्यूक जब महिषादल आए तो दरबार का एक सामूहिक चित्र उनके साथ खिंचा। उस चित्र में राम सहाय तिवारी भी हैं - 'पीछे एक चपरासी शेष सिपाही हाथ में तलवारें खींचे खड़े हुए। इस लाइन में गर्वनर की बाईं ओर एकदम सिरे पर राम सहाय तिवारी खड़े हुए 'लाइन में खड़े हुए लोगों में वह सबसे लंबे थे। सिर पर कामदार गोली टोपी गले में सोने का कंठा, भव्य दाढ़ी, मूंछे लंबी नाक, बड़ी आंखें, बिर्जिस पर फौजी कोट, आँखों में थकन हाथ में नंगी तलवार, बढ़ते हुए पेट को पेटी सी कसे हुए ..' लाट साहब के साथ पिता का यह चित्र सुर्जकुमार के मन में जैसे आत्म गौरव का बोध जगाता है। अपनी क्षुद्र स्थिति में भी जैसे गर्व करने को कुछ उसके पास है। लंबी और आकर्षक कद-काटी निराला को जैसे विरासत में मिली थी। निराला संबंधी अपने संस्मरणों में रामविलास शर्मा ने लिखा है

कि कलकत्ता में फुटबाल का मैच देखने वाले दर्शकों के बीच अपने लंबे, औरों से एक मुट्ठी ऊँचे कद के कारण ही उस भीड़ में इधर-उधर हो जाने पर निराला को आसानी से ढूंढा जा सकता था। बाद में अपनी देह को पालने-पोसने का शौक शायद निराला के इसी आत्म बोध का एक अंग था। अपनी देह की इस पूंजी के कारण ही स्कूल में सुर्जकुमार अपने साथियों का नेता था। पढ़ने की कमी को वह जैसे खेल-कूद की ढाल पर सहने-झेलने की तैयारी में लगा था। फुटबाल में वह उम्दा खिलाड़ी था और तैरने में कुशल। पहली बार ससुराल आने पर लंबे बालों के कारण उसे शंका की दृष्टि से देखा जाता है। बनाव-शृंगार के प्रति आकर्षण और पहनने-ओढ़ने का शौक शायद उसकी क्षतिपूर्ति का ही एक रूप था। अपने शरीर को सुदृढ़ और सुंदर बनाकर जैसे वह पढ़ाई-लिखाई में अपने पिछड़ेपन की भरपाई करना चाहता है।

सुर्जकुमार की साहित्यिक और सांस्कृतिक अभिरुचियों का विकास भी हुआ। महल के पास ही नाट्यशाला थी जहां राजा सती प्रसाद जब-तब नाटक करते थे। वहीं सुर्जकुमार ने बांग्ला नाटक 'तरुबाला' में एक 'हिंदुस्तानी' का पार्ट किया था। बाद में आए स्टार थियेटर के रंगमंच और उसके अभिनेताओं की चमक-दमक ने उसे कहीं गहरे में अभिभूत किया था। उन्हें देखकर उसे यह लगे बिना नहीं रहा कि सबसे बढ़िया जीवन इन्हीं लोगों का है। बांग्ला उपन्यासकार बंकिमचंद्र सरकारी अफ़सर की हैसियत से मिदिनापुर में रहे थे। स्कूल के पास, ताल के किनारे बैठकर, उसने दोस्तों से यह भी सुना था कि यहाँ रहने पर बंकिमचंद्र ने एक-दो उपन्यास भी लिखे थे। अपने बंगाली साथियों की बात चीत में यह बोध भी जब-तब उसे कराया जाता था कि बंगाली जाति महान् है, बांग्ला भाषा संसार की सर्वश्रेष्ठ भाषा है और रवीन्द्रनाथ संसार के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। यह भी सुर्जकुमार स्वयं बंगाली नहीं, 'हिंदुस्तानी' हैं। घर के परिवेश और संस्कारवश सुर्जकुमार बांग्ला की अपेक्षा हिंदी ही अधिक जानता था। भक्ति और शृंगार-रस दोनों ही प्रकार की कविताओं में उसका मन खूब रमता था। ब्रजभाषा की काफी कविता उसने पढ़ रखी थी। पद्माकर उसके प्रिय कवि थे। उनकी सानुप्रास शब्दावली, शृंगार वर्णन में भी ओजगुण का पुट उसे विशेष प्रिय था। पद्माकर के काव्य की चित्रमयता उसे आकृष्ट करती थी। स्मरण-शक्ति अच्छी होने से उसके अनेक छंद उसे कंठस्थ हो गए थे। तुलसीदास से वह पूर्व परिचित था। लेकिन विवाह के बाद पत्नी मनोहरा देवी के कंठ से उनके छंद और भजन सुनकर उसने जैसे एक नए रूप में उन्हें पाया और आत्मसात किया। साहित्य और संगीत में इतना आकर्षण इसके पूर्व उसे कभी अनुभव नहीं हुआ था। पद्माकर के कवित्तों का अर्थ भी जैसे अब और स्पष्ट होने लगे। रामचरित मानस का पाठ और भी मनोयोग से करने लगा। पत्नी के मायके में होने पर, पढ़ने पर पृष्ठों के अक्षर गायब हो जाते और उनकी जगह मनोहरा देवी की छवि तैरने लगी। एंट्रेंस की परीक्षा में, गणित के पर्चे में, पद्माकर के शृंगारी पद कापी में लिखकर वह घर चला आया था।

ससुराल-प्रवास में सुर्जकुमार की ऐंठ, वर्जनाओं के प्रति तीखे विरोध की प्रवृत्ति और पत्नी के आकर्षण के बावजूद अनेक बातों को लेकर उससे हुए मतभेद और तना-तनी का चित्रण लेखक ने बहुत सहज और आकर्षक रूप में किया है। अपने गाँव में जैसे पतुरिया के हाथ खाना मना था यहाँ कुल्ली भाट को लेकर भी वैसी ही मनाही थी। लेकिन कभी झूठ बोलकर और कभी मुँह जोरी से सुर्जकुमार ने इसका विरोध किया। मनोहरादेवी द्वारा तुलसीदास का भजन गाने पर उसे लगता है जैसे गले में मृदंग बज रहा है। इस भजन को सुनकर सुर्जकुमार के न जाने कौन से सोते संस्कार जाग उठे। साहित्य और संगीत इतने सुंदर है इसका बोध जैसे उसे अब हुआ। कानों को वह संगीत किसी दूसरे लोक से आया जान पड़ा। अपने सौंदर्य का अभिमान जैसे चूर-चूर हो गया। उसे लगा कि ऐसा ही कुछ गाने और कर दिखाने में जीवन की सार्थकता है।

निराला के जन्म से लेकर उनकी बीस वर्ष की आयु तक का आरंभिक जीवन जीवनी के उस प्रथम अध्याय में अंकित है। इसमें लेखक ने उनके मानसिक विकास और कवि-कर्म की तैयारी को पर्याप्त प्रमाण देकर अंकित किया है। इसी अध्याय में निराला के विवाह और संक्षिप्त दाम्पत्यजीवन का भी बहुत संवेदनापूर्ण अंकन किया गया है। इसी प्रसंग में अपनी कन्या के लिए माता की चिंता, निराला के पिता पं. राम सहाय तिवारी का छोटी-छोटी बातों पर रूसना-रूठना और अनेक सामाजिक कुरीतियों और जातिगत दंभ के संकेत भी जीवनी में बहुत कुशलतापूर्वक गूंथे गए है। बांगला भाषा और साहित्य की सुंगभीर जानकारी के बावजूद निराला हिंदी के पक्ष में खड़े होते हैं। अपनी पद्य और गद्य रचनाओं के द्वारा इस आरंभिक दौर में ही वे अपनी संभावनाओं को प्रकट कर पाने में सफल होते हैं।

17.6.2 भाषा-शैली

किसी भी रचना के निर्माण में भाषा एक अनिवार्य और महत्वपूर्ण घटक है। लेखक के प्रतिपाद्य का

संप्रेषण भाषा के माध्यम से ही होता है और भाषा ही रचना के प्रभाव को बढ़ाती या घटाती है। बड़े आकार और फलक वाली रचना में, जैसी निराला की यह जीवनी अपने मूल रूप में है, भाषा का एक महत्वपूर्ण कार्य उसकी पठनीयता को बनाए रखना भी है। रामविलास शर्मा सरल और प्रवाह पूर्ण भाषा में, बैसवाड़ी के छौंक, मुहावरों और लोकोक्तियों के साथ जीवनी में घटित प्रसंगों का वर्णन करते है। निराला के जन्म का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं - 'उस दिन मंगल था, महावीर स्वामी ने अपनी पूजा के ही दिन राम सहाय को पुत्र का मुंह दिखाया। दरवाजे पर बाजे बजे, नाई, धोबी, डोम वगैरह नेग मांगने आये। महिषादल में अवध के और परिवार भी रहते थे, कई घर वैसवाड़े के ही लोगों के थे। इन सबसे स्त्रियाँ आईं, सोहर होने लगे। थोड़ी देर को राम सहाय को लगा कि वह गढ़ाकोला में ही उत्सव मना रहे हैं। खैर अभी न सही, जैसे ही, मौका मिला, वह पुरखों की देहरी छुलाने बच्चे को गाँव जरूर ले जायेंगे...'

राम सहाय तिवारी अपने घर से सैकड़ों मील दूर परदेस में पड़े थे। शादी-विवाह के लिए वे अपने घर गढ़ाकोला आते थे। अपनी पुरखों की धरती के प्रति उनका आत्मीय लगाव, उत्सव-पर्वों में वहाँ के लोकाचार और रीति-रिवाजों के प्रति आग्रह और अपने वैसवाड़ी समाज से जुड़ने की उनकी ललक आदि को यह भाषा गहरी पारदर्शिता के साथ उद्‌घाटित करने में सक्षम है। इसी के तत्काल बाद, जब अपने रंग-रूप के कारण बच्चा - पंडित ने जिसका नामकरण सुर्जकुमार किया था - पड़ोस की स्त्रियों का खिलौना हो जाता है तो वे वैसवाड़ी शब्दो में ही अपने उद्‌गार प्रकट करती हैं - महतारी, बेटवा आदि शब्द इसके उदाहरण हैं।

रामविलास शर्मा अपनी भाषा में मुहावरों और लोकोक्तियों का भरपूर प्रयोग करते हैं क्योंकि वे इसे अच्छी तरह जानते हैं कि भाषा जनता की थाती है और इसी जनता द्वारा बोले गए शब्द और मुहावरे शरीर में स्वस्थ शुद्ध रक्त की तरह भाषा को निखारते हैं। इस जीवनी में प्रयुक्त कुछ मुहावरों को उदाहरण स्वरूप देखा जा सकता है। हाथ छोड़ बैठना, पानी बंद करना, कंठफूट आना, मसें भीगना, बगलें निकलना और दो दांत की लड़की आदि इसी प्रकार के कुछ उदाहरण हैं जो पाठ्यक्रम में निर्धारित अंश से ही बहुत सहज रूप में जुटाए गए हैं। इन मुहावरों का अर्थ समझकर भाषा की व्यंजना-शक्ति की सामर्थ्य को आसानी से समझा जा सकता है :

हाथ छोड़ बैठना	:	क्रोधावेश में मार बैठना
पानी बंद करना	:	समाज और बिरादरी से बाहर कर देना
कंठ फूट आना	:	मसें भीगना और बगलें निकलना

ये सारे प्रयोग यौवनागम के संकेत हैं। कंठ में गट्‌टा निकलना और आवाज़ में भारीपन का आ जाना, मुंछों के स्थान पर बालों की रेख दीखने लगना और बगलों में बाल निकलना आदि सारे चिह्न बालक से युवा हो जाने के चिह्न हैं। लेखक इन्हें निराला के प्रसंग में प्रयुक्त करके उनके गौने की भूमिका बनाता है अर्थात् अब उम्र के हिसाब से वे इस लायक हैं कि उनका गौना किया जा सके।

दो दांत की लड़की : कम उम्र की लड़की, दुनियादारी से अनजान और भोली-भाली। रामविलास शर्मा प्रसंगानुसार जीवन के विविध और विभिन्न क्षेत्रों के शब्दों से अपनी भाषा को सहज, सरल और स्वाभाविक बनाते हैं। गाँव-ज्वार, कोर्ट-कचहरी, लगान-वसूली, साहित्य-संस्कृति और प्राकृतिक सौंदर्य के वर्णन में उनकी भाषा के बदलते हुए तेवर और छवियों को देखा जा सकता है।

निराला की जीवनी का जो अंश हमारे सामने है उसमें अवध और बंगाल की परिवेशगत विशिष्टताओं और प्राकृतिक छटाओं में उपलब्ध भौगोलिक अंतर के ब्यौरे बहुत प्रामाणिक एवं विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत किए गए हैं। लेखक का मुख्य काम अपने चरित नायक के चारित्रिक और सांस्कृतिक विकास पर केंद्रित होने पर भी उसके संपर्क के अन्य प्रमुख व्यक्तियों के चरित्र पर भी लेखक बहुत सजग दृष्टि रखता दिखाई देता है। राम सहाय तिवारी का क्रोधी और वत्सल स्वभाव, स्वाभिमान और स्वामिभक्ति का द्वंद्व, पुत्री के भविष्य के प्रति मनोहरा देवी की माँ की सहज चिंता द्वारा लेखक अपने इन अपेक्षाकृत गौण पात्रों को भी बहुत विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत कर पाने में सफल हुआ है। छोटे-छोटे प्रसंगों द्वारा लेखक ने मनोहरादेवी का चरित्र गहरी संवेदनशीलता से अंकित किया है। निराला के युवा मन पर उनके गहरे प्रभाव की दृष्टि से यह ज़रूरी था। पहली बार ससुराल जाने पर पिता की सलाह पर निराला अपनी शान और ऐंठ का झूठा प्रदर्शन करते हैं। रूही की मालिश इसी भोजन का एक हिस्सा है। पिता-पुत्र दोनों के मन में यही भाव है कि इससे ससुराल वालों पर रोब तो पड़ेगा ही, खर्च

भी खूब होगा और वे लोग अपनी हार मान लेंगे। लेकिन हुआ इसका उल्टा ही। निराला की सासु जी इस पर ताना मारती हैं - 'अपने बेट की मालिश रूह से करायें और उनकी बेटी के लिए चढ़ावा इतना मामूली'!. रात को पत्नी मनोहारादेवी निराला को समझाती हैं - 'इत्र-फुलेल लगाना किसान परिवार में शोभा नहीं देता। और जब बात बढ़ने लगती है, निराला उन्हें मछुआइन का किस्सा सुनाने लगते हैं तो वह बिगड़ जाती है। वह कमरे से उठकर चल देती है। इस आरंभिक भेंट में ही निराला को लगता है कि पत्नी जैसे उनकी पकड़ के बाहर है। उसका तेजस्वी और घर-गृहस्थी के काम में कुशल रूप उन्हें गहरे में कहीं प्रभावित भी करता है। उनके कंठ से तुलसी का भजन सुनकर तो उन्हें लगता है जैसे गले में मृदंग ही बज रहा है। वस्तुतः पत्नी को इस रूप में देखकर ही निराला के, सोते संस्कार जैसे जाग उठते है। साहित्य और संगीत के प्रति उनका आकर्षण जैसे स्वयं उन्हें ही एक नए रूप में दिखाई देने लगता है। मनोहारादेवी के इस रूप को देखकर ही अपने सौंदर्य उनका अभिमान चूर-चूर हो जाता है। उनके मन में यह भाव बहुत उत्कटता से जागता है कि वे ऐसा कुछ करें जिससे यह जीवन सार्थक हो जाए। पत्नी की तुलना में अपना निकम्मापन उनके आगे स्पष्ट होने लगता है। घर-परिवार की ही नहीं, पड़ोसियों की भी सेवा और सहायता का उनका स्वभाव निराला को गहराई से प्रभावित करता है। पत्नी का चरित्र ही जैसे पति का प्रेरणा-स्रोत बन जाता है।

उपन्यास की तरह जीवनी भी अपने चरित नायक समेत अनेक व्यक्तियों का एक जीवित संसार अपने में समाये रहती है। पात्रों के बीच होने वाले संवाद उसी रूप में घटित होने का कोई प्रमाण नहीं होता है। उनकी सहजता और विश्वसनीयता ही उनकी सफलता की कसौटी होती है। उपन्यास की तरह जीवनी में भी ये संवाद कथा के विकास में सहायक होते हैं और पात्रों के चरित्र की विशेषताओं को उद्घाटित करते हैं। इस जीवनी में भी अनेक ऐसे प्रसंग हैं जिनमें संवादों की यह सहजता और विश्वसनीयता देखी जा सकती है। इन संवादों में भी निराला और मनोहारादेवी के बीच के संवाद कदाचित् जीवनी के सफलतम संवाद हैं। जैसा कि बताया जाता रहा है इन संवादों के माध्यम से ही मनोहारा देवी का तेजस्वी और स्वाभिमानी रूप बहुत सहज रूप में सामने आता है और अपनी सहजता में ही वह रूप निराला को अभिभूत करता है। सादगी और सहजता का प्रभाव ही सबसे गहरा होता है और वही निराला के जीवन की दशा बदलता है।

बोध प्रश्न-3

1. 'निराला की साहित्य साधना' शीर्षक जीवनी के अंश की विशेषताएँ बताइए।

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

17.7 सारांश

आपने इस इकाई में रामविलास शर्मा जी द्वारा लिखित 'निराला की साहित्य साधना' नामक जीवनी का एक अंश पढ़ा।

निराला जी हिंदी के महान कवि हैं। लेकिन उनकी यह महानता उनका अर्जित गुण है। बचपन में अपने अक्खड़पन और विद्रोही स्वभाव के कारण वे अपने कृत्यों से संसार से बगावत करते थे। पढ़ाई छोड़ उनका मन सजने-सँवरने में ज्यादा लगता था। उनके जीवन के इस प्रसंग को लेखक ने बिना छिपाए निष्पक्ष रूप में प्रस्तुत किया है। पत्नी की मृत्यु के बाद पश्चात्ताप की अग्नि में तपकर और पत्नी के गायन से प्रेरणा पाकर उनकी सृजनात्मक प्रतिभा फूट पड़ती है। लेखक ने निराला जी की कवित्व शक्ति के इस प्रकरण को बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

प्रामाणिक जीवनवृत्त होने के बावजूद यह अंश काव्य का आस्वादन लिए हुए हैं, अति पठनीय है। लेखक ने घटनाओं के सुंदर चित्रण खींचे हैं और संवाद को ओजपूर्ण बनाया है। इस दृष्टि से यह अंश न केवल उद्देश्यों के संप्रेषण में सफल है, बल्कि अति रोचक भी है।

17.8 शब्दावली

पंतुरिया	:	वेश्या, कुलटा
यज्ञोपवीत	:	जेनऊ
विप्रवर्ग	:	ब्राह्मण वर्ग
प्रशस्त	:	विशाल, चौड़ा
मातहत	:	अधीन
मंत्र-सिद्ध	:	मंत्र उनके वश में है
रूह	:	इत्र
औसान	:	होश-हवास
दूभर	:	मुश्किल
दारुण	:	भीषण, भयंकर
भव	:	संसार

17.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. (क) आदर्श चरित्र (ख) प्रामाणिक तथ्य (ग) संवेदना (घ) तटस्थ वर्णन
2. रेखाचित्र किसी भी व्यक्ति पर लिखा जाता है; जीवनी का प्रधान चरित्र आदर्श हो, प्रमुख हो, विख्यात हो। रेखाचित्र में लेखक के भाव महत्वपूर्ण हैं; जीवनी में चरित्र नायक (या नायिक) प्रधान है।

बोध प्रश्न-2

1. ख)
2. ख)
3. सहन शक्ति, सेवा भाव, भक्ति भाव की चर्चा कीजिए।
4. (i)
5. (ii)
6. ओजस्वी लगे, आकर्षक हो।

बोध प्रश्न-3

1. पूरी इकाई के आधार पर एक पृष्ठ में उत्तर लिखिए। वस्तु, शिल्प दोनों पर विचार प्रकट कीजिए। आप पर किसका प्रभाव पड़ा - निराला जी के व्यक्तित्व का या रामविलास शर्मा जी के लेखन का?